21

3. II

श्रीः

त्रैमासिक

श्रीस्वाध्याय

[हेमन्ताङ्क]

वर्ष ३ सं० २०००

संख्या २ पौष

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः

वार्षिक मूल्य ३)

इस अङ्क का मूल्य ।।।=)

संस्थापक—
श्रीमान् अमृतवाग्भव आचार्य

सम्पादक—
श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी

श्रीस्वाध्यायके नियम तथा उद्देश्य

उद्देश्य—

समस्त संसारको हितकी ओर ले जाना तथा ऐहलौकिक और पारलौकिक मोक्ष (स्वातन्त्र्य) प्राप्त कराना "श्रीस्वाध्याय" का मुख्य उद्देश्य है।

सञ्चालक गणोंके नियम—

संरक्षक—

(१) जो महानुभाव ३००) तीन सौ रुपयेसे अधिक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के संरक्षक माने जाएंगे।

सहायक—

(२) जो सज्जन ५०) से ३००) रु० तक प्रति वर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सहायक माने जाएंगे।

सम्मान्य ग्राहक—

(३) जो सज्जन ५) से अधिक ५०) रु० तक प्रति वर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सम्मान्य ग्राहक माने जाएंगे।

श्रीस्वाध्यायके नियम—

(१) 'श्रीस्वाध्याय' (जब तक त्रैमासिक रहेगा तब तक) आश्विन शुक्ल १०, पौष शुक्ल १०, चैत्र शुक्ल १० और आषाढ़ शुक्ल १० को प्रकाशित हुआ करेगा। इस त्रैमासिक संस्करणका वार्षिक मूल्य ३)रु० और एक प्रतिका ।।=) है। स्थाई ग्राहक आश्विनसे ही बनाये जाते हैं। श्रीस्वाध्यायके स्थायी ग्राहकोंको हमारी "श्रीग्रन्थमाला" की सभी अद्भुत अमूल्य पुस्तकें बिना मूल्य (मुफ्त) दी जावेंगी। ऐसी सर्वोपयोगी अमूल्य पुस्तकें कोई भी मासिक पत्र प्रतिवर्ष अपने ग्राहकोंको बिना मूल्य नहीं देता। यह 'श्रीस्वाध्याय' के ग्राहकोंको विशेष लाभ है। पर्याप्त संरक्षक सहायक और ग्राहक होने पर बहुत शीघ्र ही 'श्रीस्वाध्याय' मासिक कर दिया जायगा।

(२) जिन सज्जनोंके लेख श्रीस्वाध्याय सदनकी ओरसे प्रार्थना पूर्वक मंगवाये जाएंगे वे अवश्य प्रकाशित होंगे। अन्य लेख यदि गवेषणापूर्ण मौलिक और उपयोगी समझे जायँगे तो यथा समय प्रकाशित हो जावेंगे, अन्यथा नहीं।

(३) लेख, कविता, चित्र, समालोचनार्थ पुस्तकों की दो-दो प्रतियाँ और विनिमय (परिवर्तन) के पत्र पत्रिकायें **सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन [पंजाब]** के पतेसे भेजने चाहियें।

(४) लेख, कविता आदि प्रकाशनार्थ सामग्री स्पष्ट अक्षरोंमें कागजके एक ओर ही लिखी होनी चाहिए।

(५) किसी लेखके प्रकाशित करने या न करने, उसे घटाने बढ़ाने तथा उसे लौटाने या न लौटाने का सम्पूर्ण अधिकार सम्पादकको है। जिस अस्वीकृत लेखको सम्पादक लौटाना स्वीकार करें, उसका डाक और रजिस्ट्रीका व्यय लेखक को भेजना होगा। अधूरे लेख नहीं लिये जाते।

विज्ञापन छपाईके नियम—

१ पृष्ठ या दो कालमकी छपाई	२०) प्रति अङ्क
आधा पृष्ठ या एक कालमकी छपाई	११) ,,
चौथाई पृष्ठ या आधा ,, ,,	६) ,,

पूरे वर्ष या चार अङ्कोंमें एक पृष्ठकी छपाई ६५) होगी।

त्रैमासिक 'श्रीस्वाध्याय' के पृष्ठका आकार २०×३० अठपेजी। कालम स्थान ८×३ इञ्च है।

आधे पृष्ठसे अधिक विज्ञापन देने वालोंको 'श्रीस्वाध्याय' बिना मूल्य भेजा जावेगा। छपाईकी रकम पेशगी प्राप्त होने पर ही विज्ञापन पत्रमें छापा जावेगा।

विशेष जाननेके लिए—

व्यवस्थापक श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन [शिमला]

से पत्र व्यवहार करें।

❀ श्रीः ❀

श्रीस्वाध्याय

[त्रैमासिक-पत्र]

संस्थापक तथा प्रधानाध्यक्ष—

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम आचार्य

श्री १०८ मान् अमृतवाग्भवजी महाराज

संरक्षक—

बघाटमहीमहेन्द्र धर्ममार्तण्ड

राजा साहब श्री १०५ मान् दुर्गासिंहजी बहादुर C.I.E. सोलन।

रावराजा कैप्टेन श्री १०५ मान् गिरिधारीशरणसिंहजी भरतपुर।

सहायक—

श्री १०५ मती माँजी महारागी साहिबा [सिरमौरीजी] बघाटराज्य।

श्रीमान् सरदार कुंवर रणदीपसिंहजी नाहन [सिरमौर]

श्रीमान् कुंवर शिवसिंहजी B.A., L-L. B. सेशन जज सोलन।

श्रीमान् कुंवर ईश्वरीसिंहजी उपप्रधान धर्मसभा उदयपुर [मेवाड़]

श्रीमान् सरदार जगजीतसिंहजी ढिल्लों B. A., L-L' B. नाभा।

सम्पादक और व्यवस्थापक—

ज्यो०मा० ज्यो०र० श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिश्शास्त्री

उप सम्पादक—

श्री पं० बलजिन्नाथ शास्त्री B.A.

प्रकाशक—

श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (पंजाब)

❀ विषय-सूची ❀

अपनी बात

यह अङ्क समय पर हम पाठकोंको प्रस्तुत कर सकेंगे इसकी आशा इस बार हमें नहीं थी। पहले एक माससे भी अधिक समय तक तो इन पंक्तियोंके लेखकको टाइफाइड (ज्वर) और विस्फोटककी भयङ्कर वेदनाने ग्रसित किया। एकाकी व्यक्ति होनेसे डाक चिट्ठी-पत्री आदिका कार्यभार इतना रुका पड़ा था कि स्वस्थ होने पर उसे निपटाना कठिन हो गया। जगदम्बाकी कृपासे येनकेन प्रकारेण वह सब कार्य पूर्ण हुआ, और इस अङ्ककी सामग्री भी जुटाई गई। परन्तु 'श्रीस्वाध्याय' को न्यूजप्रिण्ट पेपर (अखबारी कागज) प्रयुक्त करनेकी आज्ञा (कोटा) भारत सरकारसे नहीं मिली थी, यह एक बड़ी भारी बाधा उपस्थित थी। इसके लिए कण्ट्रोलर साहबसे बहुत कुछ लिखा पढ़ी की गई तो अभी-अभी आठ दिन पूर्व इस कागज पर छापनेकी हमें आज्ञा मिली है। उसी दिनसे छपाईका कार्य आरम्भ करवाकर यद्यपि अपनी ओरसे दिन-रातके कठिन परिश्रम पूर्वक यह अङ्क शीघ्रसे शीघ्र पाठकों तक पहुँचानेका प्रयत्न किया है। तथापि इस असाधारण परिस्थितिके कारण जो ३—४ दिनका विलम्ब हुआ है उसके लिए आशा है विज्ञ पाठक क्षमा करेंगे। प्रेमी पाठकोंको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि उनके इस प्रिय पत्रकी कागजकी बाधा अब बहुत अंशोंमें दूर हो गई है। सरकारी आज्ञानुसार वर्षमें एक बड़ा विशेषाङ्क और ६० पृष्ठके तीन छोटे अङ्क हम सहर्ष भेंट कर सकेंगे। आगामी 'वसन्ताङ्क' निश्चित तिथिसे १० दिन पूर्व चैत्र शुक्ला प्रतिपदाको ही ग्राहकों तक पहुँचानेका प्रयत्न किया जाएगा।

—हरदेव शर्मा त्रिवेदी (सम्पादक)

आभार-प्रदर्शन

'श्रीस्वाध्याय' के प्रचार एवं उन्नतिमें इसके संस्थापक संरक्षक सहायकादि जिन उदारचेता महानुभावों और सहृदय विद्वान् लेखकों एवं प्रेमी ग्राहकोंने जो सहयोग दिया है, उसके लिए उन सबके हम हृदयसे आभारी हैं। इस बार नालागढ राज्यके सेशन जज साहब श्रीमान् पं० नत्थूरामजी महोदयने श्रीस्वाध्यायके प्रचारमें विशेष सहायता दी और श्रीनगर काश्मीर राज्यकी राजकीय पाठशालाके प्रधानाध्यापक श्रीयुत पं० बलजिन्नाथजी शास्त्री बी.ए. महोदयने सम्पादन कार्यमें सहयोग दिया अतः उक्त दोनों महानुभावोंके हम अत्यन्त आभारी हैं।

—हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय'

ग्राहकोंसे-

यद्यपि स्थाई ग्राहक वर्षारम्भ (विजयादशमी) से ही बनानेका नियम है, परन्तु इस बार 'नववर्षाङ्क' की सब प्रतियाँ शीघ्र ही समाप्त हो जानेके कारण इस पौषमासके 'हेमन्ताङ्क' से भी तीन अङ्कोंके लिए स्थाई ग्राहक हो सकेंगे। तीनों अङ्कोंका नौ मासका मूल्य २।) रु० मनीआर्डर द्वारा भेजना चाहिए। वैसे प्रत्येक अङ्कका मूल्य ।॥=) होगा।

जिन कई सज्जनोंको 'नववर्षाङ्क' नहीं मिल सका उन पुराने ग्राहकोंने हमें यह उपालम्भ दिया है कि "आपने प्रकाशित होते ही अङ्क हमारे पास वी०पी० द्वारा क्यों नहीं भेज दिया?" इसका उत्तर यह है कि पुराने हो वा नये, किसी भी ग्राहकको जब तक वी०पी० के लिए उनकी लिखित स्वीकृति हमें नहीं मिल जाती तब तक वी० पी० नहीं भेजी जा सकती। अङ्क प्रकाशित होनेसे १५ दिन पहले जो ग्राहक वी० पी० भेजनेके लिए हमें पत्र द्वारा सूचित कर देंगे उन्हींको वी० पी० भेजी जा सकेगी।

गत भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा ता० १४ सितम्बरके अनन्तर भी कई ग्राहकोंने वार्षिक मूल्य २।-) ही भेजा था। उनमेंसे कतिपय ग्राहकोंने तो शेष ।।=) पुनः और भेज दिये हैं; परन्तु जिन कुछ ग्राहकोंने अपना शेष मूल्य ।।=) अभी तक नहीं भेजा है; उन्हें चाहिए कि अब शीघ्र भेज दें। मूल्य मनीआर्डर द्वारा ही भेजना चाहिए।

व्यवस्थापक— श्रीस्वाध्याय-सदन,
सोलन, (शिमला)

लेखकोंसे-

इस अङ्कमें कई मान्य लेखकोंकी मौलिक रचनाएँ विलम्बसे प्राप्त होनेके कारण प्रकाशित न हो सकीं, वे यथाक्रम आगामी अङ्कोंमें प्रकाशित होंगी। आगामी 'वसन्ताङ्क' चैत्र शुक्ल प्रतिपदा ता. २५ मार्च को प्रकाशित हो जावेगा, अतः जो गवेषणा-पूर्ण मौलिक लेख वसन्तपञ्चमी ता. ३० जनवरी तक हमारे पास पहुँच जावेंगे वे ही इस अङ्कमें स्थान पा सकेंगे। जहाँ तक हो सके लेखक महानुभाव अपना लेख परिमार्जित भाषामें सारगर्भित मौलिक और संक्षिप्तरूपमें कागजके एक ओर ही लिखनेका प्रयत्न करें। संशोधनके लिए दोनों ओर कुछ तट (हाशिया) छोड़ना भी आवश्यक है। इस नियमके विरुद्ध अनवस्थित लेख प्रकाशित न हो सकेंगे।

चतुर्थ वर्षका नववर्षाङ्क (विशेषाङ्क)

इस अङ्क निर्माणकी विशेष आयोजना शीघ्र ही आरम्भ होने वाली है, अतः भारतके विशिष्ट विद्वान् अपनी विशेष रचनाएं शीघ्र भेजनेकी कृपा करें। यह अङ्क तृतीय वर्षके नववर्षाङ्कसे भी अधिक सुन्दर रोचक आकर्षक उपादेय एवं पृष्ठसंख्यामें भी बड़ा होगा। विशिष्ट रचना निम्न पते पर रजिस्ट्री द्वारा भेज कर अनुगृहीत करें।

सम्पादक—"श्रीस्वाध्याय"
सोलन (शिमला)

श्रीस्वाध्यायको—

भारतीय विचक्षणवर्ग किस दृष्टिसे देखता है—

'श्रीस्वाध्याय' पर प्राप्त हुई सम्मतियोंमेंसे भारतके सम्मानित धुरन्धर विद्वानों एवं राष्ट्रिय प्रसिद्ध पत्रोंकी सम्मतियाँ वा समालोचनाएं प्रथम द्वितीय और तृतीय वर्षके गताङ्कोंमें क्रमशः प्रकाशित की गई थीं। गत 'नववर्षाङ्क' प्रकाशित होनेके अनन्तर प्राप्त हुई अनेकों सुविख्यात साहित्यिक विद्वानोंकी सम्मतियोंमेंसे कुछ एकका संक्षिप्त भाग यहाँ और देखिये—

भारतके ख्यातिप्राप्त विद्वान् प्रसिद्ध पत्रकार 'विक्रम' के सम्पादक श्री पं० सूर्यनारायणजी व्यास उज्जैनसे लिखते हैं—

"............'नववर्षाङ्क' वास्तवमें सुन्दर है। आपके श्रम और अध्यवसायके सफल परिणामस्वरूप उसकी प्रतिष्ठा स्वतन्त्र है। अपनी शैलीका यह त्रैमासिक एक ही है..............सफलताके लिए बधाई।"

हिन्दी-साहित्यके सुप्रसिद्ध विद्वान् 'मोहिनी' आदि कई पत्रोंके भू० पू० यशस्वी सम्पादक विद्याभूषण श्री पं० मोहन शर्माजी इटारसीसे लिखते हैं—

"...............'श्रीस्वाध्याय' हिन्दू साहित्य और संस्कृतिका एक मात्र प्रचारक और प्रसारक त्रैमासिक-पत्र है। इसमें उक्त दृष्टिबिन्दुको लेकर जो लेख सामग्री प्रकाशित होती रहती है वह हिंन्दीके एक दर्जन मासिकपत्रोंको पढ़नेसे भी प्राप्त नहीं हो सकती। ज्योतिर्विज्ञान विषय पर गवेषणापूर्ण लेख, दैवज्ञकी दृष्टिमें संसारचक्र आदि पत्रकी विशेषताको बतलाते हैं। 'नववर्षाङ्क' ने साहित्य संस्कृतिमय लेखोंके संग्रहका जो आदर्श उपस्थित किया है उसमें आपकी सम्पादन कुशलताक लोग अभिमान कर सकते हैं। पञ्जाबके अनुर्वर अहिन्दी-क्षेत्रमें पत्रकी इस भांति सफलता देख कर आपके कार्यकौशल पर आश्चर्य होता है।........"

संस्कृत-साहित्यके सुप्रसिद्ध विद्वान् सनातनधर्म कालेजके प्रोफेसर विद्याभूषण विद्यावागीश श्री पं० दीनानाथजी शास्त्री सारस्वत मुल्तानसे लिखते हैं—

'श्रीस्वाध्याय' का नयनाकर्षक एवं हृदयावर्जक 'नववर्षाङ्क' ३।१ देखा। इस महर्घताके समयमें लगभग सवासौ पृष्ठोंमें विशिष्टाङ्कका प्रकाशन नितरां ही अभिनन्दनीय है। आप इसमें सफल हुए हैं। निबन्धोंका निर्वाचन भी स्तुत्य है, मुद्रण तथा प्रकाशनकी स्वच्छताका वर्णन करना तो पुनरुक्ति दोषको अपनाना होगा। क्रमशः आपने इसे उच्चकोटिके पत्रोंमें गणना योग्य बना दिया है, किम्बहुना।

'सरस्वती' के सम्पादक श्री पं० देवीदत्तजी शुक्ल, श्री भगवानदासजी केला और श्री वासुदेवशरणजी अग्रवाल जैसे कई सुप्रसिद्ध विद्वानोंकी शुभ सम्मतियाँ स्थानाभावके कारण यहाँ प्रकाशित न हो सकीं।

श्रीस्वाध्यायके प्रथमवर्षका प्रथमाङ्क—

(शरदङ्क)

प्रत्येक पत्र पत्रिकाके प्रथमाङ्कसे ही उस पत्रकी नीति और उद्देश्यका ज्ञान भलीभांति हो सकता है। इसी कारण उस प्रथमाङ्कको पाठकगण बड़ी सावधानीसे सुरक्षित रखते हैं। कई पत्र पत्रिकाओंके आरम्भका पहला अङ्क कुछ वर्षोंके पश्चात् पाठकोंको ढूंढने पर भी नहीं मिलता। 'श्रीस्वाध्याय' के प्रथमवर्षके प्रथमाङ्ककी प्रतियाँ पर्याप्तमात्रामें अधिक छपवाने पर भी अब बहुत थोड़ी प्रतियाँ शेष रही हैं। जिन नये ग्राहकोंके पास यह प्रथमाङ्क न हो वे मंगाने की शीघ्रता करें अन्यथा फिर किसी मूल्यमें भी उन्हें यह अद्भुत अङ्क प्राप्त न हो सकेगा।

इस अङ्कमें पत्रके संस्थापक सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम श्री १०८ आचार्य अमृतवाग्भवजी महाराज ने पत्रके मुख्य पाँचों स्तम्भोंमें अपने आरम्भिक मार्मिक लेख लिख कर मोक्ष, धर्म, अर्थ, काम और इतिहासके रहस्यको भलीभांति समझाया है। जब तक इस अङ्कमें आचार्य चरणोंके ये पाँचों लेख नहीं पढ़ लिए जाते तब तक धर्मार्थ काम मोक्ष एवं इतिहासका तत्त्व समझमें नहीं आ सकता। इस लिए 'श्रीस्वाध्याय' के प्रत्येक पाठकको पहले यह अङ्क अवश्य पढ़ लेना चाहिए। "ग्रहोंका चमत्कार और भारतवर्ष" शीर्षक सम्पादकका आठ पृष्ठोंका लेख भी महत्त्वपूर्ण है, ज्योतिषियोंके लिए तो यह लेख अत्यन्त उपयोगी एवं मननीय है। इसी प्रकार 'चन्द्रसूर्य ग्रहणोंका प्रभाव' 'दीपावली' 'पारिवारिक आयव्यय और मेरा अनुभव' 'ग्रहयोग प्रतियोग-चमत्कार' 'प्राकृतिक चिकित्सा' 'श्रुतिसम्मत राज्यपद्धति' 'संस्कृतसाहित्य और काश्मीरी पण्डित' इत्यादि सभी लेख अधिकारी विद्वानोंसे लिखे हुए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ज्ञानवर्द्धक हैं। साथ ही इस अङ्कमें सं० १९९९ वि० के हर्शल नेपच्यून (इन्द्र वरुण) सहित वर्ष भरके ग्यारह स्पष्टग्रह और इनके शर क्रान्ति भी दिये गये हैं, जो ज्योतिर्विज्ञानसे प्रेम रखने वालोंके लिए अत्यन्त उपयोगी है। दूसरे और तीसरे वर्षके प्रथमाङ्क समाप्तप्राय हैं, अतः इनका मूल्य क्रमशः ३) और ४।) रु० कर दिया गया है। परन्तु नये ग्राहक धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष और इतिहासका रहस्य समझनेके लिए प्रथमाङ्कसे वञ्चित न रह जावें इस सदुद्देश्यसे अभी हमने इस प्रथमवर्षके प्रथमाङ्कका मूल्य केवल १।) रु० मात्र ही रक्खा है। थोड़े समयके पश्चात् फिर यह अङ्क १०) रु० में भी प्राप्त नहीं हो सकेगा, अतः नये ग्राहकोंको यह अङ्क शीघ्र मंगा लेना चाहिए।

तृतीय वर्षके ग्राहकोंको विशेष सुविधा

अब इस तृतीय वर्षमें जो नये ग्राहक होंगे उन्हें केवल तीन अङ्क २।) रु० में मिल सकेंगे। 'नववर्षाङ्क' उन्हें प्राप्त नहीं हो सकेगा। हाँ, यदि वे चाहेंगे तो 'नववर्षाङ्क' के स्थानमें प्रथमवर्षका प्रथमाङ्क उन्हें इसी वार्षिक मूल्य ३) में ही भेजा जा सकेगा। इस प्रकार उन्हें केवल ॥।) में ही यह अङ्क प्राप्त हो जावेगा। नये ग्राहकोंको ३) रु० मनीआर्डर द्वारा भेज कर इस अवसरसे अवश्य लाभ उठाना चाहिए। जिन ग्राहकोंके मूल्यके साथ ≡) अधिक आवेंगे उन्हींको तीनों उपहार पुस्तकें भेजी जा सकेंगी। 'श्रीराष्ट्रालोक' के प्रथम संस्करणकी सब प्रतियाँ समाप्त हैं। द्वितीय संस्करण छपने पर सूचना दी जावेगी।

पता—व्यवस्थापक, श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन [शिमला]

श्रीस्वाध्यायमें क्या क्या होगा ?

विज्ञ पाठकोंको 'श्रीस्वाध्याय' के उद्देश्य तथा नीतिका ज्ञान तो भली-भांति हो ही गया है। इसमें जो मोक्षादि पाँच प्रधान स्तम्भ रक्खे गये हैं—उनके अन्तर्गत किन-किन विषयों पर लेख लिखे जा सकते हैं ? इसकी एक संक्षिप्त सूची हम नीचे दे रहे हैं। इस तालिका द्वारा हमारे विद्वान् लेखकोंको विषय चुननेमें सुविधा होगी।

मोक्षस्तम्भमें—

भारतीय दर्शनोंका संक्षिप्त परिचय। न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा, वेदान्त (शाङ्कर रामानुज निम्बार्क माध्व श्रीकण्ठ भास्कर आदि मतोंका संक्षिप्त सार) शैव (त्रिक् प्रत्यभिज्ञा पाशुपत आदि मतोंका संक्षिप्त परिचय) शाक्त (दक्षिण वाम कौल तन्त्र सिद्धान्त त्रैपुर आदि मतोंके संक्षिप्त परिचय) पारमार्थिक मोक्ष, व्यावहारिक मोक्ष आदि आदि।

धर्मस्तम्भमें—

वेदोंका स्वाध्याय। राष्ट्रिय शिक्षा। घरेलू शिक्षा। स्त्री शिक्षा। धर्म-रहस्य। धर्ममें स्मृतियोंका स्थान। कल्प-सूत्र। स्त्रीधन। दत्तक-दाय। दाय-भाग। प्रायश्चित्त विधान। पर्व व्रतोत्सवादि निर्णय। मुहूर्त्तादि निर्णय। पर्व किस प्रकार मनाये जाएं। पर्व और त्यौहारोंका राष्ट्रिय महत्त्व। पर्व माननेमें धार्मिक दृष्टिसे हानि लाभका विचार। ज्योतिश्शास्त्रानुसार तात्कालिक शुभाशुभ योग और भविष्यवाणियां। राशिफल। खगोलके ग्रह नक्षत्रादिकोंका परिचय।

अर्थस्तम्भमें—

अर्थ शास्त्र। चाणक्यके विचार। घरकी व्यवस्था। पारिवारिक आय व्यय। राष्ट्रको समृद्ध करनेके उपाय। यातायातमें अर्थ प्राप्ति। व्यापार। ज्योतिश्शास्त्रानुसार महर्घ समर्घ (तेजी मंदी) विचार। खानोंसे अर्थ प्राप्ति। आर्थिक दृष्टिसे कलाओंका विचार। पर्व और आर्थिक दृष्टि। युद्धसे आर्थिक हानि लाभ। कृषि (धान्य, फल, शाक-भाजी, ईख, कपास आदिके उत्पादन) से अर्थ प्राप्ति आदि आदि।

कामस्तम्भमें—

आयुर्वेद। शरीरके सभी अवयवोंको सुन्दर सुदृढ़ स्वस्थ ओजस्वी बनानेके उपाय। दीर्घजीवी बननेके उपाय। रसोईघर। कलाकौशल। घरकी स्वच्छता और पवित्रता। बच्चोंका पालन पोषण। भृत्योंके साथ व्यवहार। पशुपालन आदि आदि।

इतिहासस्तम्भमें—

इतिहास जाननेके साधन (ताम्रपत्र दानपत्र मुद्रा शिलालेखादि) संस्कृत-साहित्यका इतिहास। भारतीय ग्रन्थ और ग्रन्थकारोंके परिचय। भौगोलिक परिचय (देशकी सीमाएं नदियाँ पर्वत तीर्थ नगर ग्राम आदि) प्राचीनकालमें भूमण्डलके समस्त देश प्रान्त नगरादिकोंके जो नाम और सीमा थी उनके वर्तमान नाम और सीमाका विवेचन। महापुरुषों (दानवीर युद्धवीर धर्मवीर मृत्युवीर शास्त्रार्थवीर विशिष्टविद्वान् भगवद्भक्त राष्ट्रभक्त सिद्ध सती ज्ञानी आदि) के जीवन चरित्र। प्रत्येक वस्तु पर ऐतिहासिक दृष्टिसे विचार।

विशेष—

इसके अतिरिक्त 'श्रीस्वाध्याय' में कुछ सामयिक लेख भी रहेंगे। प्रत्येक अङ्ककी त्रैमासिक अवधिमें जो जो विशेष पर्व त्यौहार या जिन २ अवतारों एवं महापुरुषोंकी जयन्तियाँ आवेंगी उन उन पर विशेष रूपसे प्रकाश डाला जावेगा। आगामी अङ्क (वसन्ताङ्क) के लिए विद्वान् महानुभाव सर्व प्रथम निम्न विषयों पर सुविचारपूर्ण लेख भेजनेकी अवश्य कृपा करें।

अक्षय तृतीया। भगवान् श्रीपरशुरामजीका जीवन चरित्र। परशुरामकी जन्मभूमि कहाँ थी ? वर्तमान भारतमें परशुरामके स्थान कहाँ कहाँ हैं ? परशुरामके माता पिता—रेणुका जमदग्नि—के स्थान कहाँ कहाँ हैं ? परशुरामकी पितृभक्ति। दानवीर परशुराम। युद्धवीर परशुराम। भगवान् श्री आद्य शङ्कराचार्यका जीवन चरित्र। श्रीनारायण भट्टका जीवन चरित्र। छत्रपति शिवाजीका संक्षिप्त जीवन चरित्र, भक्तवर सूरदासका संक्षिप्त जीवन चरित्र। नृसिंहावतार आदि आदि।

सब लेख माघ शु० १५ ता० ६ फरवरी १६४४ पर्यन्त "सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (पञ्जाब)" इस पते पर पहुँचना आवश्यक है।

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः। ❀ श्रीः ❀ स्वाध्यायान्न प्रमदितव्यम्।

श्रीस्वाध्याय

[हेमन्तांक]

स्वाराष्ट्रशिक्षां गृह्णीयाच्चिकीर्षुः स्वां समुन्नतिम्।
दूरदृष्टिर्यया भूत्वा न कदाऽपि विषीदति ॥ [राष्ट्रालोक]

वर्ष ३	सोलन, पौष शु० १० बुधवार सं० २००० वि०	संख्या २

तत्तद्राष्ट्रे मानवानां व्यवस्थां शोभासम्पच्छालिनीमार्यरीत्या।
प्रेम्णा लोके स्थापयँस्तत्त्वदर्शी श्रीस्वाध्यायः कल्पतां विश्वभूत्यै ॥

—अ० वा० आचार्य

प्रभुसे !

[श्री पं० चम्पालालजी विशारद कविशेखर 'मञ्जुल']

उजड़ी उर-वाटिकामें फिरसे रस-पादप कौन लगाये यहाँ।
बस ऐसे प्रमादियोंमें अपने बल बुद्धिको कौन ठगाये यहाँ ॥
कवि 'मञ्जुल' ही-तलसे इनके भ्रम-भूतको कौन भगाये यहाँ।
इन देशके सोते हुओंको प्रभो! बिन आपके कौन जगाये यहाँ ॥१॥

सज शस्त्र स्वदेश सहायताको कभी भूलके हाथ बढ़ाते नहीं।
उर-धारण व्रत जो रणमें रिपुको रण-पाठ पढ़ाते नहीं ॥
अरि-व्यूहके भेदनमें अपने कवि 'मञ्जुल' पैर गढाते नहीं।
धिक् है उनको निज देश पै जो बलिदान हो शीश चढ़ाते नहीं ॥२॥

युद्धका अन्त

इस समय समस्त मित्र-राज्य युद्धका शीघ्र अन्त करनेकी आयोजनाएँ बना रहे हैं। मास्को, केरो (मिश्र) और तेहरान (फारस) में जो सम्मेलन हुए उनसे तो यह प्रतीत होता है कि जर्मनी और जापान दोनों राज्योंको पराजित करनेका शीघ्र प्रयत्न किया जाएगा। जर्मनीकी आधुनिक दशाका विचार करते हुए यह अनुमान किया जा सकता है कि आकाशयानोंसे बमोंकी वर्षासे जर्मन लोग तंग आजाएँ और वहाँ राज्य-क्रान्ति हो जाए। इस प्रकारसे नाजी गिर जाएं और दूसरी कोई पार्टी मित्रराज्योंके साथ सन्धि कर ले तथा यूरोपके युद्धका अन्त हो जाए। दूसरी बात यह सम्भव है कि अन्नको उत्पन्न करनेवाले प्रदेश जर्मनोंसे छीन लिए जाएं और बाहिरके देशोंसे जर्मनोंको अन्न न आ सके। तब भूखसे मर-मर कर जर्मन लोग शीघ्र परास्त हो जाएं। तीसरी सम्भावना यह हो सकती है कि जर्मन युद्ध-क्षेत्रमें विजित हो जाएं। युद्ध-क्षेत्रमें जर्मनोंका पूर्णतया दलित होना तो अतीव कठिन प्रतीत होता है। यदि इस प्रकारसे जर्मन पराजित हो भी जाएं तो यह मित्र-राज्योंकी विजय नाम मात्रकी विजय होगी। क्योंकि इस प्रकार जर्मनोंको परास्त करनेमें बड़ा समय लगेगा और मित्र-राज्योंके जन-धनका बड़ा संहार होगा। इधरसे रूस बहुत बल पकड़ लेगा। रूस तथा साम्यवादका अधिक बलवान् होना तो अंगरेजों और अमेरिकनों दोनोंके लिए अतीव भयप्रद होगा। क्योंकि साम्यवादी साम्राज्यवादियोंके सबसे बड़े शत्रु हैं। इस समय कार्य वश हो कर दोनों मित्र बने हुए हैं पर यह मित्रता तभी तक रह सकती है जब तक जर्मनी दोनोंका समान शत्रु है। इस प्रकारसे जर्मनीके पराजित हो जाने पर भी यह आशा नहीं कि इस समयके मित्र-राज्य सदाके लिए मित्र ही बने रहें। अतः युद्धके अन्त होनेकी शीघ्र कोई आशा प्रतीत नहीं होती है।

यदि हम मान भी लें कि जर्मनोंको पूर्णतया पराजित करके मित्र-राज्य अपनी मैत्री न छोड़ें तो भी युद्धका अन्त होना असम्भव है। यदि जर्मन इस समय पराजित हो भी जाएं तो जर्मनी देशको छोड़कर सारे प्रदेश उनसे छीने जाएंगे, उनके बलको बहुत न्यून व सीमित कर दिया जाएगा; ऐसा प्रबन्ध किया जाएगा कि जर्मन लोग पुनः उठ न सकें। ऐसा करने पर मित्र-राज्य निश्चिन्त हो कर बैठ जाएंगे। परन्तु क्या जर्मन लोग उसी दशामें सदाके लिए रहेंगे ? बुद्धिमें, बलमें और उत्साहमें जर्मन किसीसे न्यून नहीं। वे पुनः धीरे-धीरे अपनी शक्ति बढ़ाएंगे और पुनः बड़ा भारी युद्ध छिड़ जाएगा। मित्र-राज्योंके निवासी युद्धसे तङ्ग आये हुए होंगे, वे पुनः बढ़ती हुई जर्मनोंकी शक्तिको दबानेके लिए पुनः युद्धके लिए शीघ्र उद्यत नहीं होंगे। फलतः फिर वही होगा जो पिछले महायुद्धके अनन्तर हुआ। पिछले महायुद्धके अनन्तर जर्मनोंको प्रत्येक प्रकारसे निःशक्त किया गया था। परन्तु दस-बीस वर्षमें जर्मनोंने अपनी शक्तिको पहलेसे भी अधिक बढ़ा लिया। यही परिणाम इस युद्धका भी होगा, यदि इस समयकी मित्र-राज्योंकी आयो-

जनाएं सफल हुईं। इस प्रकारसे युद्धका अन्त तो हो नहीं सकता। कुछ वर्षोंके लिए शान्ति रहेगी और पुनः महायुद्ध छिड़ जाएंगे।

युद्धका पूर्णतया अन्त तभी हो सकता है जब आधुनिक भौतिक-विज्ञान तथा अनात्मवादप्रधान सभ्यताका अन्त हो कर अध्यात्मवादप्रधान प्राचीन सभ्यताका पुनः प्रचार हो। क्योंकि अनात्मवादमें तो भौगैश्वर्यको ही प्रथम स्थान मिल सकता है। भौगैश्वर्यका कहीं अन्त नहीं। अनन्त भौगैश्वर्यको प्राप्त करके भी यह भावना कभी मनमें नहीं उठ सकती कि 'प्राप्तं प्राप्तव्यम्' अर्थात् जो मैंने प्राप्त करना था वह मैं प्राप्त कर चुका। अब और प्राप्त करनेके योग्य कोई वस्तु नहीं। बड़ेसे बड़ा ऐश्वर्यवान् भी अधिकाधिक ऐश्वर्यको चाहेगा। भौगैश्वर्यकी लालसासे सदा परस्पर ईर्ष्या तथा स्पर्धा उत्पन्न होती रहेगी। इस ईर्ष्याके कारण सदा युद्ध होते रहेंगे। क्योंकि यह संसारका स्वभाव होता है। भोगसे लालसा शान्त कभी होती नहीं, उत्तरोत्तर बढ़ती ही जाती है। अनात्मपरक साम्यवादसे भी संसारको कभी चिरस्थायिनी शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। कल्पना कीजिए कि समस्त संसारमें रूसकी भांति साम्यवादका प्रचार हो कर तदनुसार ही राज्य स्थापित हो जाएं, तो क्या होगा? थोड़ी देरके लिए संसारमें शान्तिका शासन रहेगा और सभी साम्यवादी राज्य आपसमें मित्र बन जाएंगे। कुछ समयके अनन्तर फिर ये सोशलिस्ट राज्य भी आपसमें लड़ेंगे, और वही दशा संसारकी हो जाएगी जो आजकल है। इन साम्यवादी राष्ट्रोंमें अनेकों राज्य बहुत धनाढ्य और ऐश्वर्यशाली बन जाएंगे। परन्तु जिन देशोंमें प्राकृतिक सम्पत्ति न्यून है वे ऐश्वर्यमें भी पीछे रहेंगे। इसीसे आपसमें विद्वेष प्रारम्भ होगा और यह विद्वेष ही पुनः अशान्तिका कारण बन जाएगा।

आत्मशक्ति स्वभावतः परिपूर्ण है। कल्पित अपूर्णतासे यह अपने स्वरूपको अपूर्ण मान बैठी है। स्वाभाविक परिपूर्णता इसे अपूर्णमें कभी शान्त हो कर बैठने नहीं देती। यह अशान्ति ही समस्त सांसारिक झंझटों और कलहोंका मूल कारण है। इस अशान्तिको दूर करनेका उपाय अशान्ति कभी नहीं हो सकती। वह तो उल्टा इसको बढ़ाएगी। अतः युद्धों द्वारा कभी युद्धोंका अन्त हो नहीं सकता। युद्धोंका अन्त तो एकमात्र आध्यात्मिक विद्या ही कर सकती है। वह भी सर्वथा और सदाके लिए युद्धोंका अन्त नहीं करती है। क्योंकि सभी लोग आध्यात्मिक विद्याको प्राप्त नहीं कर सकते। फिर भी अध्यात्मप्रधान सभ्यतासे ऐसी शान्ति संसारको मिल सकती है जो शाश्वत नहीं तो चिरस्थायिनी तो अवश्य होगी। अतः चिरस्थायिनी शान्तिके लिए आध्यात्मिक विद्या ही समर्थ है। अध्यात्मप्रधान सभ्यताका उत्कर्ष तभी हो सकता है जब भारतवर्ष, जोकि इस सभ्यताका आदिगुरु है, संसारका पथ-प्रदर्शक हो। अतः जबतक भारतवर्ष दुःखाभिभूत रहेगा तबतक समस्त संसार इस महापापके फलस्वरूप अनन्त दुःखोंको भोगता रहेगा।

अभिमान

[लेखक—श्री पं० बलजिन्नाथजी शास्त्री बी० ए०]

मोक्ष शास्त्रोंके अवलोकनसे ज्ञात होता है कि बन्धनके मूल कारणोंमें एक बड़ा कारण अभिमान अर्थात् अहङ्कार भी है। सांख्य-शास्त्रमें तो इसको द्वितीय स्थान दिया गया है। प्रथम स्थान तो अहङ्कारकी भी मूल-भूत अविद्याको दिया गया है। उनका तो यह सिद्धान्त है कि वस्तुतः धर्म अधर्म, सुख दुःख, और जन्म-मृत्यु आदि सभी धर्म प्रकृतिके ही हैं। परन्तु अज्ञान मूलक अहङ्कारके कारण मनुष्य उनको अपने ही धर्म समझता है; इसी कारण वह स्वभावतः मुक्त होता हुआ भी बद्ध-जैसा अपने आपको समझता है। वेदान्ती भी समस्त संसारको माया पर प्रतिष्ठित मान कर धर्माधर्मादिको भी मायाके कार्य मानते हैं। मायाके इन अवास्तविक कार्योंमें ममत्व बुद्धि अर्थात् अहङ्कारके ही कारण जीव बन्धन में पड़ता है। अतः 'अहम्' और 'मम' इत्यादि भावोंको सर्वथा त्याग देना चाहिए, यह वेदान्तका भी उपदेश है। अन्य भी प्रायः सभी शास्त्रकार महात्मा और विद्वान् लोग इसी प्रकारसे अभिमानसे बड़ा ही द्रोह करते हैं।

अब प्रश्न यहाँ यह उठता है कि वेदान्तका तो अटूट सिद्धान्त है कि "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" अर्थात् सब कुछ परब्रह्म ही है। यदि इस प्रकारसे सब कुछ ब्रह्म ही है तो अभिमानने कौनसी चोरी की है। वह बिचारा क्या ब्रह्म नहीं ? यदि वह भी वस्तुतः परब्रह्म स्वरूप ही है तो उस बिचारेके साथ इतना द्वेष क्यों ? क्यों वह त्याज्य है ? और अन्य भाव क्यों उपादेय हैं ? शङ्का तो बहुत टेढ़ी प्रतीत होती है। प्रायः विधर्मी लोग आर्यों पर ऐसी शङ्काएं करते रहते हैं। साधारण मनुष्य तो ऐसी शङ्काका समाधान पूरी तरह नहीं कर सकता। परन्तु हमारे पूर्वज बहुत ही प्रवीण थे। ज्ञानकी ऊंचीसे भी ऊंची भूमिकाको उन्होंने प्राप्त किया था। इस प्रकारके अपने ज्ञानवान् धर्मात्मा पूर्वजोंकी उक्तियोंका थोड़ा विचार करने पर हम इससे भी बड़ी-बड़ी शङ्काओंका समाधान कर सकते हैं। विधर्मी लोगोंके बड़ेसे बड़े विद्वान् अपने सिद्धान्तों द्वारा छोटे-छोटे प्रश्नोंका भी सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सकते। भारतीय मोक्ष शास्त्रोंमें तो मुझे प्रत्यभिज्ञा-शास्त्र ही सर्वोच्च प्रतीत होता है, अतः उसी शास्त्रके सिद्धान्तके अनुसार अहङ्कारके रहस्यको प्रकट करनेका प्रयत्न किया जाता है।

वस्तुतः देखा जाए तो अङ्कारकी त्याज्यताका उपदेश स्थूल बुद्धिवाले तथा अधर-भूमिकाके ही साधकको दिया जाता है। उच्च भूमिकामें तो अङ्कार तथा अनहङ्कार दोनोंको उपादेय ही माना जाता है। क्योंकि दोनोंका मूल तो पूर्ण स्वातन्त्र्य-स्वरूप पूर्ण आनन्दरूपी परमेश्वर ही है। वस्तुतः उपादेयता और अनुपादेयताका मूल कारण पूर्णता और अपूर्णता ही है। महा कवि कालीदास भी अन्य प्रसङ्ग पर यही घोषित करते हैं। उन्होंने कहा कि:—

"रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय।"

अर्थात् रिक्तता (अपूर्णता) ही लघुता (पराभव) का कारण है और पूर्णता ही गौरवका मूल है। सर्वथा यही दशा इस अभिमानकी है। यदि अभिमान अपूर्ण हो तो त्याज्य है, यदि पूर्ण हो तो उपादेय है। त्याज्य वस्तुतः हो नहीं सकता, परन्तु त्याज्यताके उपदेशका प्रयोजन तो केवल यही है कि इसको पूर्ण बनाया जाए। क्योंकि तभी पूर्ण आनन्द भी प्राप्त होगा। एक पुरुष अपने शरीरमें ही अहंभाव और ममत्व रखता है तो उसको इस अहंभावसे थोड़ा-सा सुख तो अवश्य मिलेगा, परन्तु साथ ही दुःख भी तो मिलेगा ही। दूसरे पुरुषके पास एक सुन्दर स्त्री तथा आज्ञाकारी वीर पुत्र भी हैं, हम

देखते हैं कि ऐसे पुरुषका ममत्व पहलेसे कुछ बड़ा होता है, अतः उसको सुख भी अधिक ही इस ममत्व-से प्राप्त होता है। तीसरे पुरुषके पास इससे अतिरिक्त धन, धान्य, प्रासाद, पशु, यान आदि भी हैं। चौथा तो एक सम्पूर्ण देशका राजा (स्वामी) है, और पांचवाँ इस समस्त पृथ्वीका राजाधिराज है। विचार कीजिये तो आपको यही प्रतीत होगा कि इन सभीका अभिमान उत्तरोत्तर अधिकाधिक है, इसी कारण इनको इस अभिमानसे अधिकाधिक ही सुख प्राप्त होता है। परन्तु इनमेंसे किसीका सुख ऐसा नहीं कि दुःखसे सर्वथा रहित हो। इससे यह स्पष्ट हुआ कि अभिमान जितना-जितना पूर्ण होता जाए उतना-उतना अधिकाधिक आनन्द प्रद बनता है। परन्तु दुःख भी इससे प्रायः अधिक ही मिलते हैं। इसका यह कारण है कि जितने भी ये बढ़े-चढ़े अभिमान हैं बड़े होने पर भी सभी अपूर्ण हैं। इसी कारण इनसे दुःख होता है। इनसे भी बड़े-बड़े इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र आदि देवताओंके अभिमान भी तो अपूर्ण ही हैं। अतः वे भी अन्ततो दुःखके कारण होते ही हैं। इसी कारण हमारे आचार्योंने उपदेश किया है कि अपूर्ण अभिमानका त्याग करो।

जब हमारा अभिमान सर्वथा पूर्ण हो जाएगा तब हम यह समझ जाएंगे कि "अहमेव सर्व" अर्थात् मैं ही सब कुछ हूँ। इससे भी ऊंची दशामें फिर केवल 'अहम्' यही अवशिष्ट रह जाएगा। फिर भला जब अहङ्कार पूर्ण हो कर "अहम्" इस रूपको धारण करेगा तो उस दशामें दुःख कहाँ? वहाँ तो केवल आनन्द ही आनन्द है। क्योंकि दुःख तो अपूर्णतामें ही होता है। दुःख सदा दूसरेसे ही होता है। जब समस्त अनन्तकोटि-ब्रह्माण्ड हमें अपना आत्म-स्वरूप ही प्रतीत हो तो दूसरा कौन शेष रहा? जब दूसरा कोई नहीं, केवल 'अहं' ही 'अहं' है तो भला दुःख कहाँ? इस प्रकारसे पूर्णताके कारण अहङ्कार उपादेय है। आचार्य उत्पलदेव कहते हैं:—

नाथ! लोकाभिमानानामपूर्वं त्वं निबन्धनम्।
महाभिमानः कर्हिस्यां भविष्यामि कदा कृती॥

"अर्थात् हे नाथ! समस्त सांसारिक अभिमानोंका मूल कारण तो आप ही हैं। कब मेरा अभिमान पूर्ण बन जाएगा? कब मैं कृतकृत्य हो जाऊंगा।" यहाँ भक्त प्रार्थना करता है कि वह पूर्ण अभिमान हो कर कृत-कृत्य हो जाए।

इस प्रकारसे केवल अभिमान ही नहीं अपितु समस्त भाव-जात और सारा संसार पूर्ण परमेश्वर भावनासे उपादेय है। परन्तु जिसे पूर्ण परमात्म भाव इन सबमें प्रथित न हुआ हो उसी जीवके लिए प्रारम्भिक शिक्षामें अनात्मदृष्टिके कारण अपूर्ण संसार तथा सांसारिक भावनाओंके त्यागका उपदेश किया जाता है। पूर्ण भावनाकी प्राप्ति पर तो त्याग और राग दोनों आत्म-स्वरूपके उल्लास ही प्रतीत होते हैं। अतः उस समय दोनोंमें समदृष्टि हो कर "सर्व खल्विदं ब्रह्म" का सिद्धान्त सर्वथा विज्ञात हो जाता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि वस्तुत्व रूपसे कोई वस्तु न तो त्याज्य ही है और न उपादेय ही है। परन्तु आत्मत्व रूपसे समस्त वस्तुएं उपादेय हैं और अनात्मत्व रूप से समस्त त्याज्य हैं। अतः अहङ्कार भी किसी भावनासे उपादेय तो किसी भावनासे त्याज्य माना गया। इसी प्रकारसे जहाँ कहीं भी शास्त्रोंमें आपाततः विरोध प्रतीत होता हो वहाँ अधिकारी भेदसे व्यवस्था करके विरोध परि-हार करना चाहिए।

हम सबको चाहिए कि अपने अभिमानको अपने कुटुम्ब में ही सीमित न रहने दें, इसको खूब बढ़ाएं और पहले तो समस्त भारतवर्षको ही अपना स्वरूप समझकर इसके कल्याणके लिए प्रयत्न करें और फिर केवल भारतवर्षको ही नहीं अपितु समस्त विश्वको अपना शरीर समझकर उसका उद्धार करें। स्वामी रामतीर्थ भी एक स्थान पर लिखते हैं—"हिमा-लय मेरा शिर है, कर्णाटक और मालाबार मेरी दो जंघाएं हैं, विन्ध्याचल मेरी कमर है, पूर्व और पश्चिम-के प्रदेश मेरे बाहू हैं, मैं सारा भारतवर्ष हूँ। मैं इन अपनी दो भुजाओंको फैलाकर समस्त संसारको क्या समस्त ब्रह्माण्डको आलिङ्गन करता हूँ, क्योंकि मैं स्वयं सारा ब्रह्माण्ड हूँ। सब कुछ मेरा शरीर है।"

यह होता है महाभिमान अर्थात् पूर्ण अहङ्कारी बनना।

वेदस्वरूप निरूपण

[लेखक—विद्याभूषण विद्यावागीश विद्यानिधि श्री पं० दीनानाथजी शास्त्री सारस्वत]

[इस लेखके सुयोग्य विद्वान् लेखकका परिचय कराना मानो सूर्यको दीपक दिखाना है; आपने संस्कृत-साहित्यकी बहुत अधिक सेवा की है। 'श्रीस्वाध्याय' के लिए यह बड़े सौभाग्यकी बात है कि आपने इस पत्र के लिए अपनी गवेषणा-पूर्ण मौलिक रचनाएँ हिन्दीमें भेजनेकी कृपा की है। इस लेखको देखकर किसी भी विद्वान् पुरुषको सहसा चौंक न उठना चाहिए। इसमें कोई भी ऐसी बात नहीं है जो विद्वेष बुद्धिको प्रेरणा देती हो, यह केवल भारतीय वैदिक-साहित्यका अध्ययन करके उससे निकाले हुए वास्तविक परिणामको प्रकाशित करने वाला अनुसन्धानात्मक लेख है। इससे विरुद्ध मत रखने वाले विद्वान् भी यदि अपनी मौलिक अनुसन्धानात्मक रचना भेजेंगे तो 'श्रीस्वाध्याय' उसे भी सहर्ष प्रकाशित करेगा। 'श्रीस्वाध्याय' का उद्देश तो प्रत्येक प्रकारसे भारतीय स्वाध्यायका उत्कर्ष करना है। अनुकूल प्रतिकूल प्रत्येक प्रकारकी चर्चा के बिना वास्तविक परिणाम निकालना सम्भव नहीं। विद्वानोंको चाहिए कि इस लेखका भली भाँति अध्ययन करें; लेख अत्यन्त मननीय है। लेखमें प्रकाशित मतका उत्तरदायित्व पूर्ण रूपेण विद्वान् लेखक पर ही है। —सम्पादक]

वेदके परिमाणका निरूपण वेद-स्वरूपके अन्तर्गत पड़ता है। आज हम उसी विषयको 'श्रीस्वाध्याय' के योग्य पाठकोंके समक्ष उपस्थित करते हैं। यह एक ऐसा विषय है कि जिसकी जानकारी हिन्दुमात्रके लिए अपेक्षित है; परन्तु दुःख से कहना पड़ता है कि हिन्दु जनताका इधर ध्यान नहीं, केवल वह दूसरोंसे सुन सुना कर इस विषयमें अपनी परप्रत्ययनेयबुद्धिता का परिचय दे रही है।

आजकल के अर्वाचीन सम्प्रदायोंने अपने स्वार्थ को सिद्ध करनेके लिए हिन्दु जनताको इस भ्रान्त धारणामें ला पटका है कि वर्त्तमानमें मिलने वाले ऋक्संहिता, यजुःसंहिता, सामसंहिता तथा अथर्व-संहिता यह चार ग्रन्थ ही चार वेद हैं। शेष काठक-संहिता, काण्वसंहिता आदि उन्हींकी शाखाएं हैं, और शतपथब्राह्मण आदि उनसे भिन्न ब्राह्मणभागके अन्तर्गत हैं। इस भ्रान्तिके प्रसारमें प्रमुखभाग आर्य-समाजके प्रवर्त्तक स्वामी दयानन्दजी तथा उनके अनुयायियोंने लिया है, दूसरा भाग स्वयं सनातनधर्मी पण्डित-मण्डलने लिया है, जो कि वेदको कदाचित् आर्यसमाजकी सम्पत्ति मान कर वैदिक वाङ्मयमें ध्यान ही नहीं देता; किंवा ध्यान देने पर भी जनता में तद्विषयक प्रचार बलपूर्वक नहीं करता। आज हम इस विषयमें शास्त्रीय प्रमाणोपपत्ति सहित यह निबन्ध उपस्थापित करते हैं, आशा है कि धार्मिकगणका इधर अवधान अवश्य पड़ेगा।

यहाँ पर निष्कर्ष यह जान लेना चाहिए कि वेदके स्थूलरूपसे दो भेद हैं, एक मन्त्रभाग, दूसरा ब्राह्मण-भाग। यह दोनों मिल कर वेद कहलाता है, उपनिषद् एवम् आरण्यक भाग ब्राह्मणभागके अन्तर्गत होता है। वेदके मन्त्रभागके चार भेद होते हैं, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। इन चार भेदोंकी ११३१ ग्यारह सौ इकत्तीस शाखाएं होती हैं। इन्हीं सब शाखाओंका नाम मन्त्रभागात्मक वेद है। इन शाखाओंके इतने ही ब्राह्मण और इतने ही आरण्यक एवम् उपनिषद् होते हैं। यह सब ब्राह्मणभागात्मक वेद कहलाता है। फिर उसी मन्त्रभागके प्रयोगार्थ उतनी संख्याके श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र एवं धर्मसूत्र हुआ करते हैं—इसे कल्प कहा जाता है। यद्यपि यह भाग भी वेदका सहायक है, परन्तु पौरुषेय होनेसे वेदसे भिन्न कहलाता है। यह सब निरूपण आगे यथाक्रम होगा। अब विषयका उपक्रम किया जाता है।

वादि-प्रतिवादि-सम्मत व्याकरण-महाभाष्यकार

श्रीपतञ्जलि मुनिने सबसे पहले पस्पशाह्निकमें 'सर्वे देशान्तरे' इस वार्तिककी व्याख्या करते हुए कहा है— 'चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्या, बहुधा भिन्नाः। एकशतम् (१०१) अध्वर्यु (यजुः) शाखाः। सहस्रवर्त्मा सामवेदः (१०००)। एकविंशतिधा (२१) बाह्वृच्यम् (ऋग्वेदः)। नवधा (९) आथर्वणो वेदः'। यहाँ पर महाभाष्यकारने यजुर्वेदकी एकसौ एक शाखाएं, सामवेदकी एक सहस्र, ऋग्वेदकी इक्कीस तथा अथर्ववेदकी नौ शाखाएं कही हैं। तब १०१+१०००+२१+९ इनको जोड़नेसे चारों वेदोंकी ११३१ ग्यारहसौ इकत्तीस शाखाएं बनती हैं।

सर्वानुक्रमणीवृत्तिकी भूमिकामें षड्गुरुशिष्यने भी ऐसा ही माना है, केवल अथर्ववेदके अन्यमतसे उसने पन्द्रह भी शाखाएं मानी हैं, पर सिद्धान्तपक्ष उसका भी नौ शाखाका है। इसी प्रकार 'प्रपञ्च हृदय' ग्रन्थके द्वितीय प्रकरणमें भी चारों वेदोंकी ग्यारहसौ इकत्तीस शाखाएं मानी गई हैं। स्वा० दयानन्दजीने वसुकालाङ्कचन्द्राब्द (सं० १९३८) में प्रणीत वा प्रकाशित अपने 'नामिक' ग्रन्थमें महाभाष्यका उक्त उद्धरण देकर यों अर्थ किया है— 'साङ्गोपाङ्ग वेद अर्थात् एक सौ एक व्याख्यान (?) युक्त यजुः, हजार व्याख्यान (?) युक्त साम, इक्कीश व्याख्यान (?) युक्त ऋक, नव व्याख्यान (?) युक्त अथर्ववेद' पृ० ४। इस अर्थमें व्याख्यान शब्द पर विचार आगे चल कर होगा। फलतः इस अर्थमें भी वेद की ग्यारह सौ इकत्तीस शाखाएं सिद्ध होती हैं, पर पीछे सत्यार्थप्रकाशकी द्वितीयावृत्तिमें स्वामीजीने अथवा उनके पीछे उनके किसी शिष्यने उसमें कुछ अन्तर कर दिया। उसमें यह लिखा गया कि— मूल वेद चार हैं, पर उसकी शाखाएं ११२७ हैं। अब यही मत आर्यसमाजको भी मान्य है। इसीको स्वा० दयानन्दका मत भी कहा जाता है, जैसा कि आर्यसमाजिक पण्डित राजारामजी शास्त्रीने अपने अथर्ववेदकी भाष्यभूमिका के प्रथम पृष्ठमें कहा है—"श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वती का मत यह है कि "शाकल्यसंहिता ऋग्वेद, माध्यन्दिनसंहिता यजुर्वेद, कौथुमसंहिता सामवेद, शौनकीयसंहिता अथर्ववेद है।" यद्यपि स्वामीजीने इन शाखाओंका नाम कहीं नहीं कहा वा माना।

परन्तु शास्त्रीय सिद्धान्त यह है कि— सभी शाखाएं ही चार वेद हैं। इसको यों समझना चाहिए, जैसे वेद शब्द समुदायवाचक है, वैसे ऋग्वेदादि शब्द भी समुदायवाचक हैं। जैसे कि समुदायवाचक वेदशब्दसे ऋक् यजुः साम एवम् अथर्व यह चार अवयव एक साथ भी लिए जा सकते हैं, और 'समुदायेषु हि वृत्ताः शब्दा अवयवेष्वपि वर्तन्ते" 'समुदायवाचक शब्द अवयववाचक भी हुआ करते हैं' इस न्यायसे (जो कि महाभाष्यके पस्पशाह्निकमें कहा गया है) ऋग्वेदादि चारोंमें एकका नाम भी वेद कहा जा सकता है; वैसे ही ऋग्वेदादि शब्द भी समुदायवाचक शब्द हैं। अर्थात् ऋग्वेदकी सभी शाखाओंको मिला कर भी ऋग्वेद कहा जा सकता है; उसकी किसी भी एक शाखाको भी ऋग्वेद कहा जा सकता है।

जैसा कि— ऋग्वेदकी सभी इक्कीस शाखाएं मिलकर भी ऋग्वेद कहला सकती हैं; उसकी पृथक्-पृथक् शाकल्यसंहिता आदि शाखाओं को भी ऋग्वेद कहा जा सकता है। इसी प्रकार यजुर्वेदकी सभी १०१ शाखाओंको भी समुदाय रूपमें यजुर्वेद नामसे कहा जा सकता है, पृथक् पृथक् उसकी वाजसनेयी संहिता, कण्वसंहिता, काठकसंहिता, मैत्रायणीसंहिता आदि शाखाओंको भी यजुर्वेद कहा जा सकता है। यजुर्वेदके विषयमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि उसके शुक्ल और कृष्ण नामसे दो भेद हैं। महाभाष्य आदिमें यजुर्वेदकी १०१ शाखाएं कही गई हैं, उसमें भेदोंकी इकट्ठी गणना की गई है। उसमें १५ शाखाएं शुक्लयजुर्वेदकी, तथा ८६ शाखाएं कृष्णयजुर्वेदकी हैं, यह बात सर्व सम्मत है। उक्त प्रकारसे ही सामवेद अथर्ववेदके विषयमें भी जान लेना चाहिए।

इसके आगे यह स्मरण रखना चाहिए कि ११३१ शाखात्मक वेदका यह भाग मन्त्र-भाग नामसे कहा जाता है। दूसरा वेदका भाग ब्राह्मणभाग नामसे प्रसिद्ध है। पृथक् पृथक् दोनोंके यही नाम हैं, मिल कर दोनों का नाम वेद है; क्योंकि— 'वेद' यह समु-

दायवाचक शब्द है, यह पूर्व ही कहा जा चुका है। परन्तु 'समुदायेषु हि वृत्ताः शब्दा अवयवेष्वपि वर्तन्ते' इस भाष्यकारोक्त न्यायसे दोनोंको भिन्न भिन्न भी वेद कहा जा सकता है। ब्राह्मणभागके ही अन्तर्गत उपनिषद् आरण्यक आदिका भी समावेश हो जाता है। यही प्राचीन मत है। आर्यसमाजिक पण्डित राजाराम जी शास्त्रीने श्रौतसूत्रकारोंका मत बतलाते हुए अपनी अथर्ववेदभाष्य भूमिकामें लिखा है— "वैदिक साहित्य के दो भाग हैं, मन्त्र और ब्राह्मण। जिनमें मन्त्रोंका संग्रह है वे मन्त्रसंहिताएं कहलाती हैं, और जिनमें ब्राह्मणोंका संग्रह है वे ब्राह्मण कहलाते हैं। आरण्यक और उपनिषद् ब्राह्मणभागके परिशिष्ट होनेसे ब्राह्मणभागके अन्तर्गत माने जाते हैं। यह सारा साहित्य मिलकर वेद कहलाता है। यह कात्यायन आदि श्रौतसूत्रकारोंका मत है"।

ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि, यजुर्वेद ᳪ सामवेदमाथर्वणम्' ७।१।२ इस छान्दोग्य उपनिषद्‌के वचनमें ऋग्वेदादि शब्द समुदाय-परक हैं। उनसे ऋग्वेदादिकी सभी शाखाओं तथा सभी ब्राह्मणोंका ग्रहण इष्ट है। इसी लिए ही मनुस्मृति ३।२ श्लोककी टीकामें कुल्लूकभट्टने कहा है—

"वेदशब्दोऽयं भिन्नवेदशाखापरः" स्वशाखाध्ययनपूर्वक वेदशाखात्रयंद्वयमेकां वा शाखां मन्त्रब्राह्मणक्रमेणाऽधीत्य' इति।

परन्तु स्वा० दयानन्दजी तथा उनके अनुयायीगण ने यह भ्रान्ति फैलाई है कि— वर्तमानमें सर्वत्र प्रचलित चार संहिता तो चार वेद हैं, शेष ११२७ संख्यक उसकी शाखाएं हैं। परन्तु इस मत की भित्ति बालू की है। जिसे स्वामीजी ऋग्वेद कहते हैं, वह भी ऋग्वेदकी 'शाकल्यसंहिता' नामक शाखा ही है। जिसे स्वामीजी यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद मान गये हैं; वे उस उस वेद की वाजसनेयी—कौथुमी—शौनकी शाखा ही तो हैं। जिस प्रकार शाखा समुदायसे भिन्न शाखी पृथक् नहीं मिलता; वैसे ही ऋग्वेदादि भी अपनी शाखाओंसे भिन्न अपनी पृथक् सत्ता नहीं रखते। इसी लिए ही "ऋग्वेदविद् यजुर्विच्च सामवेदविदेव च" १२।११२ इस मनुस्मृतिके पद्यकी व्याख्या में श्रीकुल्लूकभट्टने कहा है— 'ऋग्यजुः सामवेदशाखानां येऽध्येतारस्तदर्थज्ञातारश्च'। १२।२६४ पद्यकी टीका में भी श्रीकुल्लूकभट्टने कहा है— 'ऋच ऋग्मन्त्राः, यजूंषि— यजुर्मन्त्राः, सामानि, एषां त्रयाणां पृथक् पृथक् मन्त्र ब्राह्मणानि एष त्रिवृद्वेदो ज्ञातव्यः। य एनं वेद स वेदविद्' इस प्रकार मन्त्र (शाखा) ब्राह्मण मिलकर वेद सिद्ध हुए और शाखाएं सभी वेद सिद्ध हुईं।

कई आधुनिक अनुसन्धायकगण 'ऋग्यजुः सामाथर्वाणश्चत्वारो वेदाः—सशाखाश्चत्वारः पादा भवन्ति' १।२ इस नृसिंहपूर्वतापिनी उपनिषद्‌के वाक्यमें वेदसे पृथक् शाखा शब्द देखकर भ्रान्त हुए हुए 'शाखा वेद अवयव हैं' इस मतको सदोष मानते हैं; वे भूलमें हैं। उन्हें उक्त वाक्यमें "एकशतमध्वर्युशाखाः" इत्यादि महाभाष्यकारके वाक्यसे क्या वैलक्षण्य प्रतीत हुआ; जिससे उन्हें उक्त उपनिषद् वाक्य स्वपक्षपोषक जान पड़ा। 'सशाखो वृक्षः' कहनेसे शाखा-वृक्ष पृथक् पृथक् सत्ता वाले नहीं बन जाते।

जो लोग ११२७ शाखाओंको व्याख्यान, तथा चार ग्रन्थोंको मूलवेद कहते हैं; यह मत भी निर्मूल है। तैत्तिरीय काण्व आदि जो शाखाएं विद्यमान हैं, उनमें वादिसम्मत वेदोंकी व्याख्या नहीं; किन्तु वैसे ही मन्त्र हैं। यदि प्रतिपक्षीगण शाखाओंको वेद न मानें; तब शाखाओंसे अतिरिक्त वेद कहीं ढूँढें। क्या शाखासे भिन्न भी शाखी कहीं मिल सकता है? कभी नहीं। सभी शाखाएं मिलकर ही शाखी बनती है। हम इस विषयमें आर्यसमाजिक विचार वाले दो विद्वानोंका मत उद्धृत करते हैं; जिससे ज्ञात होजायगा कि— शाखाओंसे भिन्न वेद नहीं होता और शाखा व्याख्या नहीं होती।

स्वा० हरिप्रसाद वैदिकमुनिने अपने 'वेदसर्वस्व' के प्रथम भागमें ४० पृष्ठ से ४२ पृष्ठ तक यह लिखा है—

"स्वा० दयानन्दने 'शाखा' पदका अर्थ वेदव्याख्यान लिखा है। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिकाके ग्रन्थ-

प्रामाण्याप्रामाण्य विषयप्रकरणमें लेखका आकार इस प्रकार है— 'एकादश शतानि सप्तविंशतिश्च (११२७) वेदशाखा वेदव्याख्याना अपि वेदानुकूलतयैव प्रमाण-मर्हन्ति'। इस लेखका खण्डन करते हुए सत्यव्रत सामश्रमीने ऐतरेयालोचनके शाखा-निर्णय प्रकरणमें बड़ा उपहास किया है— 'हन्त! का नाम हिता शाखेतिव्यपदेशशून्या तेन महात्मना उररीकृता; यस्या मूलवेदत्वं मत्वा शाखेति प्रसिद्धानामन्यासां तद्व्याख्यानग्रन्थत्वं मन्तव्यं भवेदिति तु अस्माकमज्ञेयमेव'।

इस उपहासका आशय स्पष्ट है कि— जितनी वेदसंहिता हैं, वे सब शाखा नामसे कही जाती हैं। ऐसी एक भी संहिता नहीं, जो शाखानामसे न कही जाती हो। जिस यजुर्वेदसंहिता पर स्वा० दयानन्दने भाष्य किया है, वह भी 'माध्यन्दिनी शाखा' सुप्रसिद्ध है। फिर उनका यह कथन कि— 'ग्यारह सौ सत्ताइस शाखा जो वेदोंके व्याख्यान ग्रन्थ हैं— परतः प्रमाण मानता हूँ' —सर्वथा त्याज्य है [या सभी शाखा व्याख्यान ग्रन्थ वा परतः प्रमाण होंगी, या सभी शाखा मूलग्रन्थ (वेद) वा स्वतः प्रमाण होंगी]।

इस उपहासके अनन्तर पं० सत्यव्रतने उसका समाधान किया है, वह भी द्रष्टव्य है। वह यह है कि— "अपि वा शाखा तत्त्वाभिज्ञेन केनचित् तच्छिष्येण तत्रैवं स्याद् विनिवेशितम्" इस समाधानको चाहे कोई अदूरदर्शी समाधान समझे, वस्तुतः यह भी उपहास है। प्रथम उपहास स्वामी जी की व्यक्ति पर है, यह दूसरा उनके अनुयायियों पर है। प्रायः श्रद्धाजड़, विद्याविमुख, अज्ञानमत्त पुरुष स्वामी दयानन्दके ग्रन्थोंमें लिखी गई प्रमाणविरुद्ध, शास्त्रविरुद्ध तथा स्वमन्तव्यविरुद्ध बातोंको दूसरोंकी मिलाई हुई कह देते हैं, जो अत्यन्त निन्दनीय है। क्योंकि— स्वा० दयानन्दने एक ऋग्वेदादिभाष्यभूमिकामें ही नहीं, स्वमन्तव्यामन्तव्यमें भी लिखा है— '११२७ वेदोंकी शाखा जो वेदोंका व्याख्यान हैं, परतः प्रमाण मानता हूँ'। मिलाना एक पुस्तकमें हो सकता है, सब पुस्तकोंमें नहीं।

मैंने (वैदिकमुनिने) बहुत चाहा कि— पण्डित सत्यव्रतके प्रथम उपहासका— जो स्वामी दयानन्द की व्यक्ति पर किया गया है, किसी प्रकार प्रतीकार किया जावे, क्योंकि— स्वामीमें मेरी श्रद्धेय बुद्धि है, परन्तु कोई वश नहीं चला। स्वामीका अर्थ सर्वथा निराधार होनेसे अत्यन्त निर्बल है'।

उक्त पुस्तकके ४३ पृष्ठमें वैदिकमुनिने लिखा है— "जब यह प्रत्यक्ष देखनेमें आता है कि— सब शाखा ग्रन्थोंमें कोई ग्रन्थ व्याख्यान और व्याख्येय नहीं है, किन्तु क्वाचित्क पाठभेद और पाठन्यूनाधिक्यको छोड़के सब एक दूसरेके समान हैं। तब ११३१ में चार शाखा व्याख्येय और शेष ११२७ [शाखा] व्याख्यान हैं, यह कल्पना करना और मानना कैसे समञ्जस कहा जा सकता है। वास्तवमें महाभाष्यकृत् पतञ्जलि मुनिका उक्त [११३१ शाखा वाला] लेख शाकल आदि प्रवचनकर्ता ऋषियोंके भेदसे वेदोंके ११३१ भेदोंको कहता है"।

पाठकोंने उक्त उद्धरणोंसे समझ लिया होगा कि— सभी शाखाएं मूलवेद हैं, व्याख्यान व्याख्येयता इनमें सर्वथा नहीं।

कई आग्रही लोग वर्तमान चार शाखाओंमें स्थित कई मन्त्रोंके पदोंके अन्य शाखाओंमें पर्याय-वाचक दिखाकर, शाखाओंको व्याख्याग्रन्थ सिद्ध करना चाहते हैं। उनका कथन है कि— "ऋग्वेदमें एक पाठ है— 'सचिविदं सखायं' १०।७१।६ इसीका व्याख्यान तैत्तिरीय आरण्यकमें है 'सखिविदं सखायं' १।३।१, 'यजुर्वेदमें एक पाठ है 'भ्रातृव्यस्य वधाय' १।१८ इसीका व्याख्यान कण्वसंहितामें 'द्विषतो वधाय' १।३ है" परन्तु यह बात असङ्गत है। ऐसा मानने पर तो उनके माने हुए चार वेदोंमें भी ऐसा व्याख्यान मिल सकता है; तब वे उन्हें भी वेद न मानें। जैसे कि— यजुर्वेद (वाजसनेयीसंहिता) १९।६० मन्त्रमें 'ये अग्निष्वात्ता ये अनग्निष्वात्ताः' यह पद है। ऋग्वेद (शाकल्यसंहिता) १०।१५।१४ मन्त्रमें, एवम् अथर्ववेद (शौनकसंहिता) १८।२।३५ के मन्त्रमें (जिसे वे मूल-वेद मानते हैं) 'ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धाः' इस प्रकार 'अग्निष्वात्त' पदकी व्याख्या मिली है, शेष

सारा ही मन्त्र बराबर है। तब क्या वैसा कहने वाले ऋग्वेद (शाकल्यसंहिता) तथा अथर्ववेद (शौनकसंहिता) को मूल-वेद नहीं मानेंगे ?।

एक दो उदाहरण और भी देखिये— 'प्रजापते ! न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव' ऋ० (शा० सं०) १०।१२१।१० यहाँ पर 'विश्वा जातानि' पाठ है। यजुर्वेद (वा० सं०) में 'प्रजापते…विश्वारूपाणि परि ता बभूव' २३।६५ और अथर्ववेदमें 'विश्वारूपाणि परिभूर्जजान' (शौ० सं०) ७।८५(८०) ३ यह पाठ है, शेष सारा मन्त्र तुल्य है। इस प्रकार अन्य मन्त्र भी दिये जा सकते हैं। तब इससे शाखाओंका व्याख्यानग्रन्थ होना कट गया।

क्या 'एष वोऽमी राजा' यजुः (वा० सं०) ६।४० इस मूल पाठके 'एष वः कुरवो राजा, एष पञ्चाला राजा' शु० य० (का० सं०) ११।३।३ 'एष वो भरता राजा' कृष्णयजुः (तै० सं०) १।८।१०।१२ 'एष ते जनते राजा' कृ० य० (का० सं०) १५।७ कृ० य० (मै० सं०) ११।६।६ यह शाखान्तर पाठ व्याख्यान कहला सकते हैं ? 'ततो न विचिकित्सति' यजुः (मा० सं०) ४०।६ इस पाठके स्थान पर 'ततो न विजुगुप्सते' यजुः (का० सं०) ४०।६ यह पद क्या पर्यायवाचक है ? किसी शाखामें बालखिल्यसूक्तोंका होना, कहीं न होना— क्या यह व्याख्यान व्याख्येयता है ? कई सूक्तोंकी न्यूनाधिकता, मन्त्रोंका भेद क्या व्याख्यान व्याख्येयता होती है ? ऐसा कहने वाले ब्राह्मणभागको भी वेदका व्याख्यान मानते हैं; तब क्या वे उन्हें वेदकी शाखाओंमें अन्तर्भूत मानते हैं। क्या वे 'सचिविदं सखायं' के व्याख्यान भूत 'सखिविदं सखायं' इस तैत्तिरीयारण्यकको वेदशाखामें अन्तर्भूत मानते हैं ? वास्तवमें यह उनका निर्मूल पक्ष है। शाखा अथवा अवयव, शाखी अथवा अवयवी— भिन्न भिन्न नहीं हुआ करते। न्यायदर्शन में कहा है—

'यस्य [अवयविनः] यतः [अवयवसमुदायाद्] अन्यत्र [भिन्नतया, स्वातन्त्र्येण इत्यर्थः] आत्मलाभानुपपत्तिः [स्व स्वरूपानिपपत्तिः]; तस्य [अवयविनः] सः [अवयवसमुदायः] आश्रयः [आधारः]। न कारणद्रव्येभ्यः [अवयवेभ्यः] अन्यत्र [भिन्नस्थाने, स्वातन्त्र्येण— इति भावः] कार्यद्रव्यम् [अवयवि] आत्मानं लभते [स्वसत्तां स्थापयतीत्यर्थः]' ४।२।१२

अर्थात् शाखी शाखासमुदायसे पृथक् कहीं नहीं होता। शाखासमुदाय ही शाखीका आश्रय होता है। इससे जो लोग मूलवेद पृथक् तथा शाखाएं पृथक् पृथक् मानते हैं, उनका मत खण्डित हो गया।

हम पूर्व लिख चुके हैं कि महाभाष्यकारने यजुर्वेदकी जो १०१ शाखाएं कही हैं, उनमें शुक्ल और कृष्ण दोनों प्रकारकी ही शाखाएं गिनी गई हैं। तब यह सभी वेद हुईं। स्वा० दयानन्दजीने कृष्णयजुर्वेद को वेद नहीं माना, परन्तु उनके मान्य श्रीपतञ्जलिने कृष्णयजुर्वेदको भी वेद माना है, प्रत्युत वेदकी सभी शाखाओंको वेद माना है, इस विषयमें कुछ उनके उद्धरण देखिये—

३।१।७ सूत्रके भाष्यमें श्रीपतञ्जलिजीने लिखा है—

ऋषिः पठति शृणोत ग्रावाणः। इति।

यहाँ पर 'ऋषि' शब्दका अर्थ है वेद, जैसा कि— 'कर्तरि चर्षिदेवतयोः' ३।२।१८६ 'बन्धने चर्षौ' ४।४।९६ इन पाणिनिसूत्रोंमें 'ऋषि' शब्दसे वेद विवक्षित है। तभी उक्त भाष्यस्थलका विवरण लिखते हुए कैयट ने कहा है — 'ऋषिर्वेदः'। इस प्रकार 'ऋषि' नाम लेकर 'शृणोत ग्रावाणः' यह मन्त्र उद्धरण करने से सिद्ध हुआ कि भाष्यकार इसे वेदमन्त्र मानते हैं। उक्त मन्त्र कृष्णयजुर्वेदकी शाखा तैत्तिरीयसंहिता १।३।१३।१ में आता है, आर्यसमाजके माने हुए चार वेद ग्रन्थोंमें नहीं। तब फिर शुक्लयजुर्वेदकी शाखाओं की भांति कृष्णयजुर्वेदकी शाखाएं भी वेदसिद्ध हुईं।

(क्रमशः)

हिन्दू पर्व (त्यौहार)

[लेखक—श्री पं० हनुमान् शर्मा जी राजज्यौतिषी]

[गताङ्कसे आगे]

संवत्सरकी पूजाविधिसे सूचित होता है कि अन्य की अपेक्षा यह त्यौहार धर्मप्राण हिन्दुओंके लिए अनेक दृष्टियोंसे बड़े महत्त्वका है। इस दिन ब्रह्माजी ने सृष्टिका आरम्भ किया था और उसमें देव दानव गन्धर्वादि; ऋषिमहर्षि मनुष्यादि, पशुपक्षी पतंगादि, नदी पर्वत वनखण्डादि और सुख सम्पत्ति या रोगादि उत्पन्न किये थे। अतः संवत्सरके पूजनमें इन सभीका समावेश होनेसे इनका भी अर्चन और संस्मरण हो जाता है और ऐसा होनेसे ही सद्भविष्य बनता है।

(४) नवरात्र—

इनमें किसी भी देव या देवीके निमित्त यजन-याजन, पठन-पाठन, जप-जाप या उपासना किए जाते हैं और निराहार, फलाहार, रात्रि-भोजन या एक भुक्तके व्रत होते हैं। शास्त्रमें चैत्र, आषाढ़, आश्विन और माघके ४ नवरात्र निर्दिष्ट किए हैं, उनमें चैत्र और आश्विनके विशेष विख्यात हैं। वैसे तो जितने प्रयोग आरम्भसे नौरात्रि पूर्ण होने पर समाप्त किए जाएं वे सब नवरात्र ही हैं, किन्तु यह शब्द विशेषकर शक्तिकी उपासनामें ही उपयुक्त किया जाता है।

एक दिनमें या दो-तीन दिनमें सम्पन्न होने वाले अन्य त्यौहारोंकी अपेक्षा 'नवरात्र' नौ दिनमें पूर्ण होते हैं और सुगम या अधिकाधिक धन-व्ययके अपूर्व आयोजनोंसे भी सम्पन्न किए जाते हैं। इनमें मुख्यतः शक्तिकी उपासना है, किन्तु इधर चैत्रमें 'राम-जन्म' और उधर आश्विनमें विजयदशमी (दशहरा) होनेसे दोनों नवरात्रोंमें ही 'शक्ति' (महामाया) और 'शक्तिधर' (महामायावी) दोनोंके निमित्त दुर्गा महोत्सव और रामजन्मोत्सव या रामलीला आदि सर्वत्र किये जाते हैं।

अधिकांश मनुष्य इन दिनोंमें सप्तशती स्तोत्रादि के पाठ, नवार्णव मन्त्रादिके जाप्य, शतसहस्रायुत चण्डी आदिके अनुष्ठान और व्रत उपवास संकीर्त्तन या अन्य अभीष्ट प्रयोग आदिके रूपमें नवरात्र पूर्ण करते हैं। एतन्निमित उचित और आवश्यक है कि प्रयोग प्रेमी पाठकोंकी हितकामनाके लिए यहाँ 'नवरात्रोंकी स्थापन विधि' और उनकी पूजाका विधान संयुक्त रहे।

नवरात्र चाहे 'वासन्ती' (चैत्रके) हों चाहे 'शारदी' (आश्विन) के हों दोनोंमें ही सूर्योदय व्यापिनी प्रतिपदा ली जाती है। यदि वह दो दिन वैसी ही हो तो पहले दिन और क्षय हो गई हो तो संवत्सरारम्भके दिन स्थापन किया जाता है। उस समय चित्रा और वैधृत्य हों तो वे अनिष्टकारी होनेसे त्याज्य माने गए हैं। परन्तु स्थापनाके नियत समय पीछे तक भी वे उतरें ही नहीं तो मध्याह्नमें घटस्थापन उत्तम होता है।

वेदी क्रम

५	६	७
४	१	८
३	२	६

नवरात्र स्थापनके निमित्त प्रतिपदाके प्रातःकालमें शौचस्नानादि नित्य कृत्यसे निवृत्त हो कर शान्तिदायी शुद्धस्थानकी पूर्वी दीवारके समीप इस प्रकारकी वेदी बनावे जिसके मध्य (नं० १) में यथाविधि कलश स्थापन किया जाय, उसके आगे (नं० २) में गणेशादिका पूजन हो और सात कोठोंकी बालूमें 'यववापन'

(जौ या जुवारे) बोये जायें। तत्पश्चात् आराध्यदेव (भगवान्) या अभीष्टदेवी (भगवती) की स्वर्णमयी चित्रमयी या अन्य प्रकारकी जैसी हो मूर्ति स्थापन करके नीचे दी हुई विधिसे पूजन करें।

(५) प्रयोग विधिः—

देशकालौ संकीर्त्य मम सर्वापच्छान्ति प्रशमन पूर्वक सकलाभीष्ट सिद्धये श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवता प्रसन्नार्थं अद्यारभ्य नवरात्रि पर्यन्तं प्रत्यहनि सप्तशतीस्तोत्रपाठमहं करिष्ये। तदंगी भूतं घटस्थापनं प्रतिमापूजनं च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नता सिध्यर्थं गणपति पूजनं च करिष्ये। वेदी समीपे उपविश्य। भूरसीत्यादिना कुशोपरि अव्रण मृण्मयं सुवासितजलपूरितं कुम्भं च स्थापयेत्। तन्मध्ये गंधाक्षतपुष्प दूर्वांकुर सर्वौषधी पंचपल्लव फल मुद्रां च निक्षिप्य। तदुपरि तंदुलपूरित पूर्णपात्रं निधाय श्रीफलं संस्थाप्य तत्रैव देवी प्रतिमां प्रतिष्ठाप्य यथा लब्धोपचारैः पूजयेत्। प्राणप्रतिष्ठापूर्वकं खड्गंचक्रेत्यादिना देवीं ध्यायेत्। ततो देशकालकीर्तनांते समेहजन्मनिजन्मान्तरेवाऽखिलसौभाग्य पुत्रपौत्र धनधान्यादि समस्त मंगल प्राप्त्यर्थं सकलदुरितोपशान्तये अभ्युदयार्थं च देवीप्रतिमापूजनमहं करिष्ये। तत्रादौ कलश पूजनम्। अस्मिन् कलशे गंगादि नदीः वरुणं चावाहयामि। गंधाक्षतपुष्पं समर्पयामि। आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं च राक्षसां। कुर्वे घंटारवं तत्र देवताह्वानलक्षणं। घंटायैनमः गंधादिभिः संपूज्य। भो! दीप ब्रह्मरूपस्त्वं ज्योतिषां प्रभुरव्ययः। अतस्त्वां स्थापयाम्यत्र मम शांति प्रदो भव। दीपसमीपे गंधाक्षतपुष्पाणि निधाय। ततः कलशोदकेन शुद्ध जलेन वा पूजाद्रव्याणि प्रोक्षयेत्। हस्ते पुष्पाक्षतं गृहीत्वा "ध्यायेत्सिंहासनारूढां सायुधां सुचतुर्भुजाम्। नानालंकार शोभाढ्यां दिव्यमाल्यांबरावृताम्। इति ध्यानं। आवहयामि भक्त्या त्वां शिविकाभिर्हयैर्गजैः। पूजार्थं मण्डपे नानामणिहाटक निर्मिते। आवाहनं। आसनं स्वर्णरत्नाढ्यं मृदुतूलपरिच्छदम्। ददामि भक्त्या स्थित्वास्मिन्नुपचारान्गृहाण भोः। आसनं। पाद्यं स्वीकुरु मद्दत्तं चरणाम्बुरुहद्वये। युक्तं सुगंध पुष्पाणि मणिहेमनवांकुरैः। पाद्यं। अर्घ्यं हस्तद्वये दत्तं चंदनोशीर वासितम्। यवदूर्वांकुरफलं पुष्परत्नान्वितं मुदा। अर्घ्यं। आचम्यतां तोयमिदं वस्त्रपूतंसुगंधितं। आनीतं यमुनागंगातीर्थेभ्योऽतिप्रयत्नतः। आचमनीयं। दुग्धंकामदुघोत्पन्नं देवानां प्रीतिकारकम्। स्नानार्थं च मयानीतं गृहाण घटसंयुतम्। पयस्नानं। दधिस्नातुं ददाम्येतदानीतं दधिसागरात्। गृहाणमसृणं स्वर्ण घटस्थं चारुशीतलम्। दधिस्नानं। घृतं पितृमनुष्याणां देवानां प्रीतिकारणं। स्नातुं गृहाण तत्कालं प्रतप्तनवनीतजं। घृत स्नानं। मधुः। शर्करां गुड़संभूतां शुभ्रां-मलनिवारिणीं। तुभ्यं ददामि स्नानार्थं स्वादुस्वादुत्तरामयं। शर्करा। स्नानार्थं जलमानीतं शीतमुष्णं यथारुचिः। सुगंधितं सर्वनदीतीर्थेभ्यः प्रतिगृह्यतां। स्नानं। अत्रैवाभिषेकमपि कुर्यात्। ततः वस्त्रयुग्मं गृहाणेदं रत्नकिङ्किणिकायुतं। श्वेतं पीतं तथा रक्तं नीलं चित्रं यथारुचिः। वस्त्रं। यज्ञसूत्रं त्रिवृत्सौत्रं राजतं काञ्चनं नवं। रत्नग्रन्थियुतं शुद्धं मन्त्रितं प्रतिगृह्यतां। यज्ञोपवीतं कञ्चुकीसूचिकावेधरहितो विश्वकर्मणा निर्मितां विलसन्मुक्ता गुच्छां स्वीकुरु मङ्गले। कंचुकी। हरिद्रां मङ्गले कार्ये गृहीतां मुनिदैवतैः। मातर्गृहाण सुस्निग्धां मुखचन्द्रानुरञ्जनीं। हरिद्रां। कुंकुमं सर्वसौभाग्य सूचकं भाल भूषणं। स्वीकुरुष्व जगन्मातर्जपाकुसुम भास्वरं। पुष्पं। कज्जलं नवनीताढ्यं शुद्धकर्पूरमिश्रितं। गृहाण नेत्रभूषार्थं दत्तं स्वर्णशलाकया। कज्जलं। कंठसूत्रं कङ्कणानि ताटके मौक्तिकं तथा। मंजीरपदकादीनि स्वीकुरुत्वं जगन्मये। अलंकारं। सिन्दूर नागसंभूतं स्त्रीणां सीमंतभूषणं। मातर्ददामि ते प्रीत्यै गृहाण जगदम्बिके। सिंदूरं। चन्दनं मलयोद्भूतं कुंकुमागरु मिश्रितं। अष्टगंध समायुक्तं अग्रे भाले विलेपय। चंदनं। अक्षतान् हीरक निभान् रक्तान्पीतान्यथारुचि। शोभार्थं संप्रदास्यामि गृहाण सुमनोहरान्। अक्षतं। मालती चंपकवरावकुलाशोकदाडिमी। यथाप्रीति सिताः पीता पुष्पजातीर्गृहाण भोः। पुष्पाणि। धूपं नानापरिमलं यक्षकर्दममिश्रितं। दशांगद्रव्यसंयुक्तमंगीकुरु मयार्पितं। धूपं। काञ्चनीयं पात्र संस्थं नवगोघृत साधितं। अर्पयामि महाध्वांत गजपंचास्यसन्निभं। दीपं। नैवेद्यमन्नसूपाज्यशाकपक्वान्न-

संयुतं। स्वर्णपात्रस्थितं स्वादु भुक्त्वा त्वं तृप्तिप्राप्नुहि। नैवेद्यं। फलानि जंबु नारिंग नवाम्र कदलानि च। गृहाण बदरीद्राक्षानारिकेलानि भक्षितु। फलानि। आचमनीयं। ताम्बूलं मुखरागार्थं लवंगैलाहिसंयुतं। पर्णक्रमुक कर्पूर मुक्ता चूर्णान्वितं मुदा। ताम्बूलं। दक्षिणां नवरत्नाढ्यां स्वर्णरौप्य परिष्कृतां। विपुलां बहुतोषार्थं स्थापयामि तवाग्रतः। दक्षिणां। आरातिक्यं तवपुरः करोम्युज्ज्वल दीपकैः। मणि कर्पूर तैलाज्य सम्भवैर्लक्षसंमितैः। नीराजनं। मंत्रपुष्पांजलिं पूजां न्यूनत्वाधिक्य पूरणं। ददामि तंत्र-पौराण-मंत्रोच्चारण पूर्वकं। पुष्पाञ्जलिं। ततो उपस्थिते सति नाम मंत्रेणान्य देवानपि पूजयेत्। इति सामान्य पूजाविधिः।

उपरोक्त प्रकारसे देवीका, अन्य देवताओंका, पुस्तकका और ब्राह्मणोंका पूजन करके यथा विधि पाठ या जप-जाप आदि करना चाहिये और नवरात्र समाप्त होने पर तद्दशांशका हवनादि करके नवरात्र प्रयोगको समाप्त करना चाहिये। यह स्मरण रहे कि पूर्वोक्त पूजा विधिमें यथा मति फेर बदल करके देवी की भाँति अन्य अभीष्ट देवकी पूजा भी की जा सकती है। यथा 'सिंहासनां' को— (पद्मासनं) 'चतुर्भुजां' को (चतुर्भुजं) 'कंचुकी' को (वसनं) और 'जगन्मातः' को (जगत्पितः) आदि बना कर स्वाभीष्ट देवका पूजन कर सकते हैं। आगे अनेक बार देव-पूजाके प्रसंग या प्रयोजन आवेंगे उनमें हर जगह पूजा प्रयोग नहीं दिया है। अतः इसीसे वहाँ भी पूजनादि करना चाहिये।

(६) सिञ्जारा—

चैत्र शुक्ल प्रतिपदासे रामनौमी तक भगवान् रामचन्द्रके जन्मोत्सवका पूर्व सप्ताह है। इसमें एक भी दिन त्यौहारोंसे खाली नहीं गया है। शास्त्रमें सौभाग्यवती स्त्रियोंके लिये 'बालेन्दु पूजन' का विधान है। यह चैत्र शुक्ल द्वितीयाको किया जाता है। उस दिन सौभाग्यवती स्त्रियोंको प्रातःकालमें शौचस्नानादिसे निबटे पीछे चंद्रव्रतका संकल्प करना चाहिये और सायंकालमें बालचन्द्रके दीख जाने पर गन्धाक्षतादिसे पूजन करके सौभाग्यवृद्धिकी प्रार्थना करनी चाहिये। उसके बाद पति पुत्रादिके साथ या एकाकी भोजन करना चाहिये। सदाचारिणी स्त्रियाँ उस दिन रात्रिमें कच्चा भोजन (दाल भात) नहीं खाती हैं। अतः पतिदेव उनको प्रीत्युपहारका पक्वान्न भोजन कराते हैं। राजपूतानामें विशेषकर जैपुरकी तलहटी में यह व्रत 'सिञ्जारा' के नामसे विख्यात है, और 'सिञ्जारा' शृङ्गार का अपभ्रंश मालूम होता है। वास्तवमें उस दिन स्त्रियाँ दिन भर शृङ्गार करती रहती हैं और रात्रिमें आमोदसे प्रयुक्त होती हैं। यह व्रत गौरी तृतीया के पहले दिन किया जाता है और इसमें आकाशस्थ चन्द्रका पूजन होता है।

प्रयोग विधि—

देशकालौ संकीर्त्य० अमुक गोत्रायाः अमुकी देवी नामधेयाः सौभाग्यवृद्धये बालेन्दुपूजनमहं करिष्ये। गणपतिं स्मृत्वा आकाशस्थ चंद्रं निरीक्ष्य। चंद्रदेशे शुद्धोदकं निक्षिप्य। गंधाक्षतपुष्पादिना पूजयेत्। ततो बद्धां जलिना"भो! चंद्रस्त्वं निशानाथ! रोहिणीप्राणवल्लभः। इमां मया कृतां पूजां त्वं गृहाणनिशाकरः।" इति संप्रार्थ्य भोजनांते सुखेन शयीतः।

(७) गणगौर—

यह सौभाग्यवती स्त्रियोंका और विशेषकर नवविवाहिता लड़कियोंका त्यौहार है। इसमें स्त्रियाँ विविध प्रकारके वस्त्राभूषणोंसे विभूषित होती हैं और प्रातःकालके नित्य-कृत्यसे निबट कर पूर्वाह्नमें स्त्री-समूहके साथ गणगौरका पूजन करती हैं। गणगौर (या गौरी गण) की मूर्त्तिका भीगी हुई चिकनी मिट्टी से स्त्रियाँ स्वयं निर्माण करती हैं। शिव-भक्त जिस प्रकार मिट्टीके महादेव बना कर पार्थिव पूजा करते हैं, उसी प्रकार स्त्रियां गौरी (पार्वती) की मूर्ति बना कर उसे पूजती हैं, पूजाके समय एकाधिक अनेक स्त्रियाँ इकट्ठी होती हैं और वे सब अपनी अपनी बनाई हुई

मूर्त्तियोंको पूजती हैं, इसी कारण गौरी गणका 'गणगौर' नाम विख्यात हो गया है।

शास्त्रमें इस व्रतको मास पर्यंत करनेका विधान है। राजपूतानामें विवाहित और अविवाहित दोनों प्रकारकी लड़कियाँ होलीके दूसरे दिन (उदय व्यापिनी प्रतिपदा) से प्रारम्भ करके पूरे गणगौर तक पूजती हैं। और चैत्र शुक्ल तृतीयाको उसका विसर्जन करती हैं। इसमें होलीकी भस्मसे गौरीकी मूर्त्ति बनायी जाती है, उसीकी लड़कियोंके समूहमें पूजा होती है। विशेषता यह है कि उस वर्षमें जिस लड़की का विवाह हुआ हो उसके घर जाकर अन्य लड़कियाँ पूजती हैं और दूर्वाके अंकुरोंसे गौरीकी मूर्तिका अभिषेक करती हैं।

यद्यपि यह तृतीया उदयव्यापिनी ली जाती है और तृतीयाकी अधिष्ठात्री गौरी होनेसे उसीमें उसका पूजन श्रेष्ठ है। (तथापि दो तृतीया हों तो दूसरे दिन पूजन होना अच्छा है।) 'मुहूर्त मात्र सत्वेऽपि गौरी व्रतं परे दिने'। परन्तु स्त्रियाँ इस प्रकारके निर्णय नहीं करतीं। वे सबके इकट्ठी हो जाने पर तत्काल ही पूज लेती हैं। उनकी पूजा-विधि इतनी ही होती है कि नियत समयमें सब स्त्रियाँ इकट्ठी हो कर अपने जमघटे के बीचमें गणगौरको रख लेती हैं और "ऊठिये गणगौर माता खोल किवाड़ी, बाहर ऊभी थारी पूजन हारी' आदि गायन रूपके मंत्रोंसे गणगौर पूजती हैं और साथ ही कहानी (कथा) कह कर अपने अपने घर जाती हैं। यदि उनको शास्त्रोक्त प्रकारसे साधारण रूपकी पूजा-विधि बतला दी जाय तो बहुत अच्छा हो।

(८) दोलोत्सव—

शास्त्रमें लिखा है कि — चैत्र शुक्ल तीजको पूर्वाह्नमें शंकर (ईश्वर) सहित गौरीका पूजन करें। पूजनमें रोली, मोली, सुपारी, धूप, केशर, पान, पुष्प और नैवेद्य आदि सब अर्पण करें। और फिर मध्याह्नोत्तर उन दोनोंको किसी पालने या चौकी आदि पर बराबर विराज कर गाजे बाजे लवाज़मेके साथ घुमा लावें, रातमें जागरण करें और दूसरे (या तीसरे दिन) प्रदक्षिणा करके उनका विसर्जन कर देवें। यदि अधिक मास हो तो यह उत्सव यथा समय किया जाय।

प्रयोग विधि—

'तृतीया दिने प्रातरुत्थाय शुचिर्भूत्वा नववस्त्राभूषणानि परिधाय शुभासने पूर्वाभिमुखीं उपविश्य आचम्य ईश्वरं गौरीं च ध्यात्वा संकल्पं कुर्यात्। तत्सदद्येत्यादि अमुकगोत्रायाः अमुकीदेव्याः ममाखिल सौभाग्यसम्पत्तिसंतानादि प्राप्तये हरगौरी पूजनं करिष्ये। बद्धांजलिना ईश्वर गौरीं ध्यायेत्। पूर्वोक्त प्रकारेण आवाहनासनपाद्यार्घ्याचमनीयमित्यादिना षोडशौपचारैः संपूज्य। वरं संप्रार्थ्य नववस्त्रं विविधाभूषणानि च परिधाप्य तां शुभासने सुदृढासने वा संस्थाप्य 'गीत' वाद्यादिना समारोहेण वा तां शनैःशनैः आंदोलयेत्।' इति।

राजपूतानेके अनेक नगरोंमें ईश्वर गणगौरकी मूर्ति बना कर उनको अच्छे वस्त्राभूषणोंसे सुशोभित करके गाजे-बाजे और जन-समूहके साथ गाँवके बाहर किसी बाग बगीचे या जलाशय आदि पर ले जाते हैं। और मिट्टीकी छोटी मूर्तियोंको विसर्जन करके बड़ी मूर्तियां वापस ले आते हैं। अपनी-अपनी सामर्थ्य और रीतिके अनुसार यह दोलोत्सव सभी जगह होता है। और अनुराग या हैसियतके अनुसार मेला भी हो जाता है। सामान्य श्रेणीके भोमियोंकी छोटी बस्तियोंसे लेकर बड़े-बड़े राजा रईस और जागीरदारोंके नगर ग्राम या शहरों तकमें यह उत्सव मनाया जाता है। कई जगह घासके बाते और काठके चाटूसे ईश्वर गणगौर बनाकर उनको प्राचीनकालकी पोशाक पहनाते और ढाल तलवार लगाते हैं। कई जगह मिट्टीकी मूर्ति नवीन बनाकर या बाजारसे लाकर उसे वस्त्राभूषणोंसे सजाते हैं। और कई जगह

शिल्पीसे तैयार करवाके या अपने आप बनाके पूजते और सुशोभित करके घुमाते हैं।

जयपुरमें और तत्समीपी चौमूँ और सामोदमें यह उत्सव अधिक समारोहसे मनाया जाता है। आठ वर्षकी बालिकाके बराबर काठ मिट्टी या कागजकी कुट्टीके ईश्वर और गणगौर बनाये जाते हैं। उन पर रङ्ग और रोगनके वस्त्र-भूषण तो बने ही रहते हैं। उनके सिवाय ठुकराणियों या राज-राणियों अथवा सौभाग्यवती स्त्रियोंके जैसे और सरदार लोगोंके जैसे बिलकुल अभोगत (किसीके भी न पहिने हुए) कपड़े और जेवर पहनाते हैं। जयपुर राज्यमें और चौमूँ सामोद जैसे ठिकानोंमें ईश्वर गणगौरकी सुन्दर और मनोहर मूर्तियाँ बनी बनाई सुरक्षित रहतीं हैं। मेलेके दिन उनको पोशाक और जेवर पहनाते हैं। और कहारोंके कन्धे पर उनका पालना रखवाके गाजे बाजे लवाजमेके संरक्षक एवं सहगामी नरनारियोंके साथ उनको बाहर ले जाते हैं, और वहाँ गायन वादन करवाके हवाई छोड़कर वापस ले आते हैं। जयपुरमें और चौमूँ सामोदमें तीज गणगौरके मेले बड़े भारी होते हैं। दूर-दूरके हजारों नर-नारी देखने आते हैं और उनके आनेसे अनेक प्रकारके खेल खिलौने मिठाई और वस्तुएं बिक जाती हैं।

जनश्रुतिमें विख्यात है कि एक बार हाड़ा राजा (कोटाबूंदी वालों) के यहाँ गणगौरका दोलोत्सव हुआ था। दैवयोगसे गणगौरकी मूर्तिका जलप्लावन होने लगा, तो उसको रोकनेके लिये स्वयं हाड़ाजी जलाशयमें उतर गये, किन्तु उनका प्रयास सफल न हुआ, तब लोगोंने यह लोकोक्ति विख्यात कर दी कि 'हाड़ाको ले डूबी गणगौर' किसी जमानेमें कई जगह गणगौरके लूट ले जानेकी भी कल्पना की जाती है। इस विचारसे ईश्वर गणगौर और तीजोंके साथ शस्त्रधारी राजपूत और पुलिस आदिके पहरे भी यथा सामर्थ्य होते हैं। जयपुरमें यह विधान (केवल ईश्वर गणगौरके सम्मानके अनुरोधसे) बड़े भारी समारोहका होता है। अस्तु।

विज्ञ पाठक विचार सकते हैं कि इस त्यौहारसे कितने प्रकारके लाभ हैं। (१) छोटी अवस्थाकी बालिकाओंमें देव-पूजा, पति-भक्ति, मलिन मनकी पवित्रता, उपवास, और वेष भूषासे सुसज्जित होनेकी विधि मालूम हो कर अनुरागका उदय होता है। (२) गौरी सौभाग्यकी बढ़ानेवाली तथा धन पुत्र और श्रेष्ठ पतिकी देनेवाली है यह धारणा हो जाती है। (३) धर्माचरण उपासना विधान और मनोगत पति-लाभके लिए कष्ट सहनेकी आदत पड़ जाती है और शक्ति आ जाती है। (४) काठ मिट्टी या कागजकी कुट्टी आदिसे मूर्तियाँ बनाने, उनको विविध प्रकारके वस्त्र पहराने, अनेक प्रकारके जेवरोंसे सुशोभित करने और भ्रमण करा लाने आदिकी प्रयोजनीय कलाके कौशल अपने आप आ जाते हैं। (५) और हेमाचल जैसे नामी राजाकी बेटी होने पर भी जटाजूट धारी अति वृद्ध और भयङ्कर वेष रखनेवाले शिवजीको पति बनानेके लिए जैसे पार्वतीने प्रगाढ़ अनुराग प्रकट किया वैसे ही पति-वल्लभ होने और सच्ची पतिव्रता बननेकी दृढ़ता बढ़ती है। अस्तु।

चैत्र शुक्ल चतुर्थीको भी यह कृत्य इसी प्रकार किया जाता है। और पञ्चमीके दिन इस व्रतकी समाप्ति हो जाती है। उसे 'रंगीली-पञ्चमी', कहते हैं। शास्त्रमें चैत्र शुक्ला चौथको गणेश दमनक-का आरोपण, पंचमीको लक्ष्मीपूजन, षष्ठीको स्कंध दमनकारोपण, सप्तमीको सूर्य दमनकारोपण और अष्टमीको भवानी उत्पत्ति मनानेके विधान हैं। अष्टमी यदि पुनर्वसु युक्त हो तो अशोक (आशा-पाला) की आठ कली (जो पत्तोंके कोमल अंकुर की होती हैं) खानी चाहिये। उनके खानेसे शोक सन्ताप दूर होते हैं। इसी अष्टमीमें दुर्गाके निमित्त पूजा पाठ और बलिदान आदि कृत्य किये जाते हैं।

बलिदानमें अर्धरात्रि व्यापिनी अष्टमी ली जाती है। जैपुर आदि राजधानियोंमें बलिदानका विधान भी बड़े समारोहसे होता है।

(६) श्री रामनवमी—

यह उत्सव मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्रजीके संस्मरणमें सम्पन्न किया जाता है। राम चरित्रके सुनने जानने या पढ़नेवालोंको मालूम है कि "अयोध्याके महाराजा दशरथजीको बुढ़ापेमें पुत्रेष्टि-यज्ञ करनेसे पुत्र लाभ हुआ था। राम लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न ये चार पुत्र उनको उस यज्ञकी खीरके प्रभावसे प्राप्त हुए थे। चारों भाइयोंमें रामजी बड़े शत्रुघ्न छोटे और भरतजी तथा लक्ष्मणजी बीचके थे। चारों एक मन, ४ तन थे। उनमें भगवान् रामचन्द्रजीने लोक व्यवहारके मार्ग और उसके रूपको आदर्श बनाया था। बचपनसे लेकर बुढ़ापे तककी रामलीलासे पद-पद पर लोक व्यवहारकी लाभदायक और कल्याणकारी शिक्षा मिलती है। पति पत्नीको, पिता पुत्रको, भाई भाई को, देवर भोजाईको, स्वामी सेवकको, गुरु शिष्यको, शत्रु मित्रको और व्यवहारी तथा व्यवहार्य को किस प्रकारका परस्पर में वर्ताव करना चाहिये, ये सब शिक्षा भगवान् रामचन्द्रके चारु-चरित्रोंको देखने सुनने या पढ़नेसे स्वतः प्राप्त हो सकती हैं। और तदनुसार वर्ताव करनेसे संसारका और सांसारियोंका समुचित रूपमें कल्याण हो सकता है। यहाँ उनका दिग्दर्शन भी नहीं कराया जा सकता है। बाल्मीकि रामायण और राम-चरित्र मानससे मनुष्योंको आप ही मालूम हो जाता है कि भागवान्ने भवसागरसे उतारनेके लिए रावणादिको मार कर सीताको लानेमें कितने कष्ट सहे थे। यही कारण है कि उपकारके बदलेमें कृतज्ञता प्रकट करनेवाले भारतवासी रामचन्द्रका जयन्ती महोत्सव अन्तःकरणकी भक्ति और विश्वाससे मनाते हैं और (आडम्बर शून्य अथवा मेले आदिका समारोह) दोनों प्रकारसे इस उत्सवको सम्पन्न करनेमें अपना अमिट कल्याण मानते हैं। भारतीय जनतामें आज भी राम जन्मकी प्रतीक्षा और तन्निमित्तके उत्सव उत्साह उसी प्रकार किया जाता है जिस प्रकार साक्षात् राम जन्मके अवसरमें हुआ था। तथा चैत्र शुक्ल प्रतिपदासे नौ दिन तक तो नित्य उत्सव होते ही रहते हैं। छोटेसे छोटे और बड़ेसे बड़े मन्दिरोंमें, हरिकीर्त्तन करनेके स्थानोंमें और धर्मानुरागी सद्गृहस्थोंके घरोंमें यथायोग्य सभी जगह यह उत्सव मनाया जाता है।

इस निमित्त चैत्र शुक्ल नौमी (१) मध्याह्न व्यापिनी लेनी चाहिए। (२) पहले दिन मध्याह्न में हो और दूसरे दिन न हो तो पहले दिन करना चाहिए। (३) दोनों दिनोंमें मध्याह्नमें हो। अथवा दोनों ही दिन न हो तो दूसरे दिन करना चाहिए। अष्टमी विद्धा न लेनी चाहिए। (४) कई एक पुनर्वसु युक्त अष्टमी विद्धा मध्याह्न व्यापिनीको छोड़कर दूसरे दिन ३ मुहूर्त भर हो तो भी उसीको करते हैं। (५) यदि ऐसा अवसर आजाय कि नौमीका व्रत हो कर दशमी को भोजन करके फिर एकादशीका व्रत करना पड़े और कदाचित् दशमी टूट कर दूसरे ही दिन स्मार्त्त एकादशीका व्रत हो तो स्मार्त्तोंको अष्टमी विद्धा पहली नौमीका व्रत करना चाहिए। किन्तु वैष्णवोंके लिए तीन मुहूर्त्त हो तो भी दूसरी नौमीका व्रत करनेकी ही आज्ञा है। और (६) यदि शुद्ध नौमी मिले ही नहीं तो अष्टमी विद्धा करना चाहिए। राम, कृष्ण, वामन और नृसिंह इन चारों जयन्तियोंके व्रत करनेसे यद्यपि पुण्य नहीं होता है। यह तो हमारा कर्तव्य है; किन्तु न करनेसे पाप अवश्य होता है।

राम नौमीके दिन पूर्व प्रतिष्ठित मूर्तियाँ, शालग्रामजीकी शिलाओं, या भगवान् रामचन्द्रजीकी धातु या पाषाणादिकी बनी हुई पूर्व स्थापित प्रतिमाओंका 'राम पूजा पद्धति' — 'विष्णु पूजा पद्धति' या 'प्रतिमा पूजा विधि' आदिके अनुसार भगवान्का पूजन किया जाता है। चरणामृत पञ्चामृत और प्रसाद आदि वितरण किए जाते हैं। नित्यके भोग राग-पूजा समारोह और गायन वादनादिकी अपेक्षा हर बातमें अधिकाई और विशेषता की जाती है। उस दिनकी आरती और जयघोष भी उच्च स्वरसे सम्पन्न होते हैं।

तात्पर्य यह है कि येन केन प्रकारेण भगवान्का नाम स्मरण किया जाता है, और उद्धार होनेकी कामना की जाती है। जैपुर और सामोदमें 'रामनौमीका मेला' भी बहुत बड़ा भरता है, और उसमें जनसमूहके इधर उधर घूमनेके सिवाय किसी प्रकारका कोई कृत्य नहीं किया जाता है। देहाती (किसान लोग) अपने जातीय गीत गाने और उन्मत्त हो कर नाचनेमें बड़े मस्त या तल्लीन होते हैं। इस नवमीका उत्सव अयोध्या में अधिक होता है।

१० प्रयोग विधिः — आचम्यप्राणानायम्य देशकालौसंकीर्त्य मम समस्त पापक्षयद्वारा श्रीराम प्रीतये रामनवमीव्रतांगत्वेन रामपूजां करिष्ये। गणपति पूजनांते पुण्याहवाचनं नांदीमुखश्राद्धञ्च कृत्वा। फलपुष्पाक्षत सहितं जलपूर्णं ताम्रादिपात्रं गृहीत्वा। "उपोष्यनवमीं त्वद्य यामेष्वष्टसु राघव।।तेन प्रीतो भव त्वं मे संसारान्त्राहिमां हरे।" इतिमन्त्रेण पात्रस्थं जलं क्षिपेत्। अथ ध्यानं— "कोमलाङ्गं विशालाक्षं इन्द्रनीलसमप्रभम्। दक्षिणांगे दशरथं पुत्रान्वेक्षणतत्परम्। पृष्ठतो लक्ष्मणं देवं सच्छत्रं कनकप्रभम्। पार्श्वे भरत शत्रुघ्नौ चामरव्यजनान्वितौ।अग्रे व्यग्रं हनूमन्तं रामानुग्रह कांक्षिणम्"। (इति ध्यायेत) 'सहस्रशीर्षा०' आवाहयामि विश्वेशं जानकीवल्लभं प्रभुम्। कौशल्यातनयं विष्णुं श्रीरामं प्रकृतेः परम्। (आवाहनं) श्रीरामागच्छ भगवन् रघुवीर नृपोत्तम। जानक्या-सह राजेन्द्र! सुस्थिरो भव सर्वदा। (सन्निधानं) रघुनायक राजर्षे नमो राजीवलोचन। रघुनन्दन मे देव श्रीरामाभिमुखो भव। (सम्मुखीकरणं) पुरुषएवेद० राजाधिराज राजेन्द्र रामचन्द्र महीपते। रत्नसिंहासनं तुभ्यं दास्यामि स्वीकुरु प्रभो। (आसनं) 'एतावानस्य०' त्रैलोक्यपावनानन्त नमस्ते रघुनायक। पाद्यं गृहाण-राजर्षे नमो राजीवलोचनम्।' (पाद्यं) 'त्रिपादूर्ध्व०' परिपूर्णपरानन्दं नमो रामाय वेधसे। गृहाणार्घ्यं मया-दत्तं कृष्णविष्णोर्जनार्दनम्।' (अर्घ्यं) 'तस्माद्विराड्०' नमः सत्याय शुद्धाय नित्याय ज्ञानरूपिणे। गृहाणाचमनं नाथ सर्वलोकैकनायक। (आचमनीयं) 'यत्पुरुषेण०' ब्रह्माण्डोदरमध्यस्थैस्तीर्थैश्च रघुनन्दन। स्नापयिष्याम्यहं भक्त्या त्वं गृहाण जनार्दन। (स्नानं) पञ्चनद्येत्यादिना (पञ्चामृतस्नानं) 'तं यज्ञं बर्हिष०' तप्तकाञ्चनसंकाशं पीताम्बरमिदं हरे। संगृहाण जगन्नाथ रामचन्द्र नमोस्तुते। (वस्त्रं) 'तस्माद्यज्ञात्०' श्रीरामाच्युतयज्ञेश श्रीधरानन्तराघव। ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयं गृहाण रघुनन्दन। (यज्ञोपवीतं) 'तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऋच०' कुंकुमागरु कस्तूरी कर्पूरञ्चन्दनं तथा। तुभ्यं दास्यामि राजेन्द्र श्रीराम स्वीकुरु प्रभो। (गन्धं) 'अक्षन्पितरो०' अक्षताः परमा दिव्या०' (अलङ्कारं) तस्मादश्वा०, 'तुलसीकुन्दमंदार जातिपुन्नागचंपकैः। कदम्बकरवीरैश्च कुसुमैःशतपत्रकैः। (पुष्पाणि) अथाङ्गपूजा—श्रीरामचन्द्राय नमः पादौपूजयामि। राजीवलोचनाय० गुल्फौ०। रावणान्तकाय जानुनी०। वाचस्पतये० उरू०। विश्वरूपाय० जंघे। लक्ष्मणाग्रजाय० कटिं। विश्वमूर्तयेमेढ्ं। विश्वामित्रप्रियाय० नाभिं। परमात्मने० हृदयं।श्रीकण्ठाय० कण्ठं।सर्वास्त्रधारिणे० बाहू। रघुवराय मुखं। पद्मनाभाय जिह्वां। दामोदराय दन्तान्। सीतापतये ललाटं। ज्ञानगम्याय शिरः। सर्वात्मने सर्वांगं पूजयामि। (अत्र शक्तौ सहस्रतुलसीदलं समर्पणं कार्यं) 'यत्पुरुषं०' वनस्पतिरसोद्भूतोगन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः, रामचन्द्रमहीपालधूपोयं प्रतिगृह्यतां। (धूपं) 'ब्राह्मणोस्य०, 'ज्योतिषांपतये तुभ्यंनमो रामाय वेधसे। गृहाण दीपकं चैव त्रैलोक्यतिमिरापहं।' (दीपं) 'चन्द्रमामनसो' इदं दिव्यान्नमृतं रसैःषड्भिसमन्वितं। लेह्यं पेयञ्च नैवेद्यं सीतेश प्रतिगृह्यतां। (नैवेद्यं) (मध्येपानीयं० उत्तरापोशणं० हस्तप्रक्षालनं० मुखप्रक्षालनं० उद्वर्तनार्थेचन्दनं०) नागवल्लीदलैर्युक्तं पूगीफलसमन्वितं। ताम्बूलं गृह्यतां राम कर्पूरादि समन्वितं। (ताम्बूलं) 'इदं फलं मया०' (फलं) हिरण्यगर्भेति (दक्षिणां) 'मङ्गलार्थं महीपाल नीराजनमिदं हरे। संगृहाण जगन्नाथ रामचन्द्र नमोस्तुते। (नीराजनं) 'कर्पूरगौरमिति' (कर्पूरार्तिक्यं) (प्रदक्षिणां) 'यज्ञेन यज्ञ०' 'कोमलांगं०'। (पुष्पाञ्जलिं) नृत्यैर्गीतैश्च-वाद्यैश्च पुराणपठनादिभिः। पूजोपचारैरखिलैः सन्तुष्टो-भव राघव!।' 'मन्त्रहीनं क्रियाहीनं०' (क्षमाप्रार्थना) इति श्रीराम पूजा।

आशा-निराशा

[लेखक—श्री पं० गौतम शर्मा जी शास्त्री]

धर्मादिमोक्षपर्यन्तं वैदिकं लौकिकं तथा।
आशाऽनुबन्धकं सर्वं यावत्कर्मकलापकम् ॥१॥
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं प्रायश्चैत्तिकमेव वा।
दृष्टं चाऽदृष्टकं यत्तद्ध्याशारूपमुदाहृतम् ॥२॥
आशाबन्धुरबन्धूनामाश्रयोऽनाश्रितात्मनाम् ।
परितृप्तिरतृप्तानामश्रान्तिः श्रान्तिभागिनाम् ॥३॥

धर्म प्रेमियों !

इस समय हम जिस विषयको 'श्रीस्वाध्याय' के पाठकोंकी सेवामें उपस्थित कर रहे हैं वह विषय प्राणि-जगत्में विशेष कर मानव-जगत्में एक विशेष महत्त्वका विषय है। कौन बुद्धिमान् मनुष्य नहीं जानता कि प्रकृति-नटीकी संसार रूपी इस रङ्ग स्थलीमें प्रविष्ट हो कर कोई भी व्यक्ति (मानव प्राणी) छाया-ग्राहिणी इस आशाके मोह-पाशसे अछूता न बचा होगा, न बच सकेगा, और ना ही बच सकता है। देव योनिसे ले कर मनुष्य योनि पर्यन्त सभी प्राणी—चाहे कोई मुनि-मुनीश्वर हो, योगी योगीश्वर हो, सिद्ध सिद्धेश्वर हो, राज राजेश्वर हो। सारांश यह कि चाहे जो भी हो आशाके अमिट प्रभावसे कोई भी नहीं बच सकता, यह एक सर्वतोऽनुभूत तथ्य सिद्धान्त है।

जिस भाँति किसी वात-व्याधिग्रस्त अथवा शीतज्वराक्रान्त मनुष्यको निर्वात स्थानका सेवन करना कराना असम्भव एवं भ्रान्ति मात्र है। क्योंकि "वायुर्वै प्राणिनां प्राणाः" अर्थात् जब कि वायु ही समस्त प्राणि-जगत्का प्राण है, या यों समझिये कि समस्त प्राणि-जगत्का प्राण ही वायु है। जैसा कि लोकमें सुनते हैं "जब तक सांसा तब तक आसा" ऐसी स्थितिमें क्षण भरके लिए भी तो किसी प्राणीको निर्वात स्थानमें नहीं रख सकते, यदि कुछ हो सकता और कर सकते हैं, तो केवल यही कि उक्त रोगीको बाह्य वायुके सञ्चार विशेषसे बचाए रखना। परन्तु स्मरण रहे सर्वथापि वायुविहीन नहीं रख सकते। ठीक इसी भांति किसी महापुरुषके विषयमें जो किम्वदन्ती सुना करते हैं—"अमुक महात्मा निर्द्वन्द्व, निरीह, आशातीत हैं" आदि आदि यह भी उसी प्रकारकी धारणा है, जिस प्रकार उपरोक्त रोगीके लिए निर्वात स्थानकी कल्पना। ऐसा महापुरुष भी बाह्यजगत्की दृष्टिसे न सही आन्तर्जगत्की दृष्टिसे तो अवश्य ही आशा बद्ध है। क्योंकि जब तक यह जीव इस पाँच भौतिक शरीरमें बंधा है तब तक कर्मके फन्देसे नहीं छूट सकता, जैसा कि गीतामें कहा है—

नहि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः॥

तथाः—

न कर्मणा मनारम्भान्नैकर्म्यं पुरुषोऽश्नुते।
न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति॥

इत्यादि वाक्योंसे सुतरां जान पड़ता है कि चाहे कोई योगी हो अथवा भोगी; ज्ञानी हो अथवा ध्यानी, बिना इच्छा (आशा) के किसी भी (व्यापार) क्रिया में प्रवृत्त नहीं हो सकता। जैसा कि मनुजीने कहा हैः—

अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेहकर्हिचित्।
यद्यद्धि कुरुते किञ्चित्तत्कामस्यचेष्टितम्॥

इत्यादिसे स्पष्ट हो चुका है कि कोई भी प्राणी क्या जाग्रत, क्या स्वप्न किसी भी दशामें निष्क्रिय नहीं रह सकता, मनकी गति-विधिका सम्पूर्ण चित्र चित्रण "यज्जाग्रतोदूरमुदैति" इत्यादि मन्त्रषट्कमें भलीभांति दर्शाया गया है।

उक्त क्रिया मन, क्रम, वचन, भेदसे तीन प्रकार-की हुआ करती है और यह तीनों प्रकारकी क्रिया सात्विक, राजसिक, तामसिक गुणोंके अनुसार विभिन्न विविध रूपोंमें परिणत होती है। उदाहरणार्थ सत्त्व-प्रधान जीव यमादि साधनचतुष्टय-सम्पन्न हो कर स्वात्मानुभूति, ईश्वर साक्षात्कार, मुक्तिलाभादि उच्च कोटिके कामोंमें प्रवृत्त होते हैं। रजः प्रधान जीव धन, पुत्र, कलत्र, मान, प्रतिष्ठादिकी प्राप्ति तथा निज देश, जाति, कुलके समुन्नत करनेके कामोंमें प्रवृत्त होते हैं। एवं तमः प्रधान जीव परस्त्री, धन, आदिका हरण तथा शत्रु-मारणोच्चाटनादिके नीच कामोंमें प्रवृत्त होते हैं। स्मरण रहे कि तमः प्रधान जीवोंको उक्त नीच प्रवृत्तियोंका नाम ही दुराशा है। इसका स्थान अधार्मिक् जगत्में रहता है, आशाका धार्मिक् जगत्में। इन दोनोंमें यही अन्तर है, अस्तु। जैसा कि पीछे कहा गया है प्राणी-विश्वके यावत् क्रियातन्त्रका मूलभूत बीज अथवा मूल मन्त्र आशा ही है। यहाँ यह भी समझ लेना चाहिये कि किसी व्यक्तिमें सदा एक ही प्रकारकी आशा नहीं रहती, प्रत्युत देशकाल अवस्था तथा अधिकारीकी योग्यताके अनुसार क्षेत्रांकुर न्यायसे समय-समय पर एक समयमें एक अथवा अनेक प्रकारकी आशाएं उत्पन्न तथा नष्ट होती रहती हैं। जिस प्रकार किसी खेत में कभी केवल मकई, बाजरा, अथवा ज्वारका बीज बोया जाता है कभी एक बीजके साथ दो (मकई-ज्वार) और कभी तीन-चार भी इकट्ठे बोये जाते हैं। फिर दूसरी ऋतु आने पर उसी खेतमें दूसरे ही प्रकारके गेहूँ या गेहूँ-चना अथवा और कोई इसी ऋतुका बीज बोया जाता है, परन्तु किसी भूमिमें कोई ऐसा भी दृढ़ बीज बोया जा सकता है जो सुदीर्घकाल तक स्थायी रह सके। जैसे बड़, पीपल, आम, जामुन आदि। कभी-कभी ऐसा भी देखनेमें आता है किसी भूमिमें बीज और उसके वप्नाकी क्रिया अलक्षित है। परन्तु देखते ही देखते उसमें आज अंकुर और कुछ समयमें पूर्णकाय वृक्ष अथवा कोई अन्य पौदा दिखाई देने लगता है, बस ठीक इसी प्रकार इस (कर्म-क्षेत्र) शरीरके विषयमें समझ रखना चाहिये। आशाके कर्म रूपी बीज (इस जन्म या पूर्व जन्मके) प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपमें स्थित रहते हैं, जो यथा देशकाल-अवस्थाके अंकुरित हो कर फलस्वरूपमें प्रतिभासित हुआ करते हैं। कर्म-मीमांसकोंका यह अटल सिद्धान्त है। यथाः—

पूर्वदत्ता च या विद्या पूर्वदत्तं च यद्धनम्।
पूर्वदत्ता च या नारी अग्रे धावति धावति ॥

इत्यादि। परन्तु हाँ, इस बातके माननेसे भी कोई आना-कानी नहीं कर सकता। जो भूमि ऊपर है जिसमें उत्पादक (पार्थिव) परमाणु क्षारता आदिके कारण सर्वथा दूषित हो कर नष्ट हो चुके हैं, जिस प्रकार ऐसे क्षेत्र (भूमि) में कोई भी कृषि-क्रिया-दक्ष नाहीं किसी आशाको लेकर किसी बीजके बोनेका ही यत्न करेगा और यत्न करने पर भी सफल नहीं होगा, उसी प्रकार जिन महात्माओंका अन्तः करण जन्म-जन्मान्तरोंके शुद्ध-पवित्र विचारों द्वारा नितान्त ऊसर हो चुका है, जो कर्म उपासना ज्ञान इन तीनों आधार भूमियोंको पार कर चुके हैं, जिनके सम्बन्धमें —

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्यकर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥

ऐसा कहा जाता है। सम्भव है ऐसी महान् आत्माओं पर आशाका कोई टोना (जादू) न चल सके। परन्तु सच पूछो तो नहीं, तत्त्व दर्शियोंका तो यहाँ तक कहना है कि जिस परब्रह्म परमेश्वरके विषयमें "सपर्यगाच्छक्रमकायमव्रणम्" इत्यादि श्रुति निराकार, निर्विकल्प, निर्विकार, निर्द्वन्द, निर्गुण, अविनाशी आदि कह कर पुकारती है वह भी इस ऐन्द्रजालिका (जादूगरनी) आशाके जालसे निर्मुक्त नहीं हो सका, उसे भी समय-समय पर आशाके चक्रमें आ कर राम, कृष्ण, वराह, नरसिंह, आदिके रूपमें अनेक अवतार धारण करने पड़े। जैसा कि स्वयं श्रीमुखसे गीतामें कहा है "यदा यदा हि धर्मस्य" इत्यादि। तथा "एकोऽहं बहुस्याम्" इस प्रकार किसी

आन्तरिक आशा विशेषसे प्रेरित हो कर ही तो सृष्टिकी रचना आदिमें प्रवृत्त होना पड़ा। बस अब इससे पाठकोंको भली-भांति ज्ञात हो गया होगा कि 'आशा' कितनी दुर्जेय एवं दुरूह वस्तु है, हमारे विचारमें तो जहाँ "सर्वं विष्णुमयं जगत्" ऐसा कहा गया है वहाँ पर "सर्वं ह्याशामयं जगत्" यदि ऐसा कहा जाए तो कोई अत्युक्ति नहीं।

सहृदय! आइये, जिस आशाके सम्बन्धमें इतना कुछ लिखा गया है, उसके विषयमें भी तनिक विचार कर लें। वस्तुतः वह आशा है क्या (वला) वस्तु? यथार्थमें आशा शब्द आङ् उपसर्ग पूर्वक "स्वादि गणस्थ अशू-व्याप्तौ" तथा क्रियादि गणस्थ "अश-भोजने" इन उपरोक्त दोनों धातुओंसे सिद्ध होता है जिससे "आशा" शब्दका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ इस प्रकार होता है, यथा— "अश्नुते-व्याप्नोति-व्यापक रूपेण तिष्ठति निमित्तादि कारणवत्तया पञ्चभूतादि वस्त्सर्वत्रेत्याशा" आशाको आशा इस लिए कहते हैं कि यह संसारके यावत्कार्यकलापके प्रति निमित्तादि कारण स्वरूप हो कर सदा स्थित रहती है। जिस प्रकार बिना पृथिव्यादि पंचकारणके यावत् घट-पटादि जड़-चेतन स्थूल जगत्का अस्तित्व नहींके बराबर है, उसी प्रकार मानव-जगत्का समस्त धर्मादि पुरुषार्थ-चतुष्टय स्वरूप यावत्कर्मकलाप भी आशा निमित्त कारणसे (व्यभिचरित) खाली नहीं। अथवा "आश्यते-आस्वाद्यतेऽभीष्टार्थमनयेत्याशा" अर्थात् आशाको आशा इस लिये कहते हैं, क्योंकि मनुष्य प्राणी आशाके द्वारा ही तो धर्मादि अभीष्टोंको प्राप्त कर पूर्ण पुरुषत्व प्राप्त करनेके योग्य बनता है। देखिये सृष्टिके आरम्भ-कालसे वेदादि वाङ्मय-शास्त्रोंकी आज तक इतनी भारी प्रतिष्ठाका यदि कोई कारण है तो आशा ही है, इसीको लेकर मनुष्य तत्तच्छास्त्र प्रतिपादित धर्म-कर्मादिमें प्रवृत्त होते हैं। मनुष्येतर प्राणी-जगत्में आशाका विकास बहुत थोड़ा है, इस लिए धर्म-कर्म यज्ञानुष्ठान आदि करनेमें पश्वादिकी कोई प्रवृत्ति नहीं देखते। मनुष्योंमें जितनी भी जप, तप, व्रत, अर्चा, पूजा, तीर्थ-यात्रा, दान-पुण्य आदि विविध प्रकारके धर्म-कर्मोंकी नित्य नई रचनाएं देखनेमें आती हैं, सो क्यों? इसका विशुद्ध और निष्पक्ष उत्तर यही है कि किसी आन्तरिक आशासे प्रेरित हो कर ही मनुष्य उपरोक्त प्रकारके शुभ कार्योंमें प्रवृत्त हुआ करते हैं। यही नहीं—तनिक विचारदृष्टिसे देखिये और विचारिये—माता अपने गर्भस्थ बालकके योग-क्षेमके लिए निजके दैनिक आहार, विहार, शयन, आसन आदिमें कितनी परिमितता और नियन्त्रणसे काम लेती है, बालकके जन्म होने पर चार-पांच वर्ष तक उसके मल-मूत्रादिमें लिथड़-पिथड़ रहतीं तथा उसके तनिक रुग्ण होने पर किस प्रकार बिना खाए, बिना सोए, रात-दिन एक कर देती, एवं विविध प्रकार के मणि-मन्त्रौषधादि द्वारा उसके रोगका यथोचित उपचार कराती है, सो क्यों? पिता सर्दी, गर्मी, भूक-प्यास, देश-विदेश यात्रा आदि अनेक कष्ट सहन कर सन्तानके लिए दिन-रात धनादि संग्रह करता है, ऐसा क्यों? इसी प्रकार पुत्र माता-पिताको, पत्नी पतिको, शिष्य गुरुको, दास स्वामीको, प्रजा राजाको, भक्त अपने आराध्यदेवको जो प्रति दिन और प्रति क्षण अपनी सेवा-सुश्रूषासे प्रसन्न रखनेका भरसक यत्न किया करता है। आप फिर पूछेंगे क्यों? इन सबका उत्तर ठीक वही आशा है। युवा स्त्री-पुरुषोंमें योग्य पति-पत्निके प्राप्त करनेकी आशा ही उन्हें नियमित समय तक ब्रह्मचर्य पालन करने, विद्यादि सद्‌गुण प्राप्त करनेमें सहायक होती है। कई लोग अथाह समुद्रोंमें गोते लगाते, कई दुर्गम पहाड़ोंमें पहुंचते, कई बीहड़ वनोंमें विचरण करते, व्यापारी व्यापारमें, खेतीहर खेतीमें, विद्यार्थीगण विद्याभ्यासमें, दुकानदार अपनी दुकानदारीमें, राजा महाराजा युद्धोद्योगमें जो दिन-रात प्रवृत्त हुए दिखाई देते हैं, यदि सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जाय तो कहना पड़ेगा कि इन सबका मूलभूत कारण आशादेवी ही है, क्योंकि "नहि प्रयोजनं विना मन्दोऽपि प्रवर्तते" यह एक सिद्धान्त वाक्य है। बिना प्रयोजन यानी आशाके मूर्खसे मूर्ख व्यक्ति भी किसी काममें प्रवृत्त नहीं होता, इसी लिये तो "आशा बन्धुः संसारः" यह वृद्ध वाक्य

लोकमें सार्थक है। जिन मानसिक प्रवृत्तियोंको हम इच्छा, भावना, श्रद्धा, तृष्णा, दया, धृति, स्तुति, कीर्ति, भक्ति, हृष्टि, तुष्टि, प्रेम, उपकार, सत्य, शौच, मोह तथा उद्योग आदिके नामसे व्यवहृत करते हैं, यदि वास्तविक दृष्टिसे देखें तो जान पड़ेगा ये सब इस आशादेवीके ही उपचारक-उपचारिका हैं; अथवा यों समझ लीजिये कि इनका आशाके साथ एक प्रकारका कार्य-कारण अथवा उपजीव्य-उपजीवक भाव सम्बन्ध है, क्योंकि इन सबकी प्रवृत्ति-निमित्तिका आशा ही है; अस्तु।

कुछ विद्वानोंका मत है—

आशा हि परमं दुःखं निराशा परमं सुखम्।
एकामाशां परित्यज्य त्रैलोक्यविजयी भवेत्॥

अर्थात् संसारमें आशा ही सब दुःखों और निराशा ही सब सुखोंका मूल है, एक केवल आशाको छोड़ मनुष्य त्रिलोक-विजयी हो सकता है, इत्यादि। हमारे विचारमें ऐसे वाक्य मानव जगत्को अकर्मण्यताका पाठ पढ़ाते हैं और ऐसे वाक्य अकर्मण्य पुरुषोंके ही— (जो निरुद्यमी, आलसी, परावलम्बी, निठल्ले रहनेमें ही जीवनका आनन्द अनुभव करते हैं) हो सकते हैं। इस निराशावाद या दैववादने प्रायः भारतके प्रत्येक नर-नारीके हृदय-पटल पर अपना आसन जमाए रक्खा है। वस्तुतः इसी दैववाद या निराशावादने भारतको इस हीन दीन दशाको पहुँचा दिया कि हम अपने कर्तव्य-पथ पर चलना तो क्या आँख उठाकर भी उसकी ओर नहीं निहार रहे। कितना पतन! कितनी ग्लानि!! कितनी नीचता!!! हा! धिक्कार है हमारे पुरुषत्वको और शतवार धिक्कार है हमारे राम, कृष्ण, प्रताप, शिवाजी आदि महापुरुषोंके भक्त कहानेको। क्या उनका जीवन हमें निराशावादी होना सिखाता है? उनके जीवनमें बताओ तो सही कौनसी ऐसी घटना है जिसमें आशावादकी झलक न मारती हो? आज दूसरे देश आशावादके सहारे देखिये तो सही क्या कुछ कर रहे हैं। एक देश दूसरे देशको पराजित करनेकी आशाको ले कर अपना तन, मन, धन सब कुछ न्योछावर करनेको कटिबद्ध है, और इधर हम निराशादेवीके पुजारी जब कभी जापान या जर्मनके भारत पर आक्रमणका समाचार देख लेते हैं, बस तभी वनों-पर्वतोंकी खोहोंकी राह ढूंढ़नेकी चिन्ता करने लगते हैं। हम नित्य महाभारत गीता आदि पुस्तकोंको पढ़ते सुनते हैं— जिनमें कहीं भी निराशावादकी गन्ध नहीं। भगवान् श्रीकृष्णने अर्जुनको, नहीं नहीं प्रत्युत प्राणिमात्रको कर्मयोग (आशावाद) का ही उपदेश दिया है, अतः हमें निराशावादको तिलाञ्जलि दे कर पूर्ण आशावादी (कर्मयोगी) बनना चाहिए। वस्तुतः हम गीता आदिको "श्रवणं पाप नाशनम्" समझकर ही बैठे रहते हैं, अन्य देश वासियोंने ही गीताके महत्त्व और रहस्यको समझा। हम शताब्दियोंसे पुकार रहे हैं "इक बार फिर भी आजा वंशीके बजाने वाले" इत्यादि। भला सोचो जो उपदेश भगवान् कृष्ण हमारे लिये दे गये थे, हम अब तक उस पर नहीं चल रहे, तो क्या अब श्रीकृष्णको बुलाकर उनसे अपने निराशावादकी साक्षी करानी है? और दूसरे हमारे बुलानेके शब्दोंमें वह अभिव्यंजकता या आकर्षण ही नहीं जिसमें वे समझें, कि हाँ मेरी भारतमें आवश्यकता है। अब जब कि सभी देशोंमें युद्धकी भयङ्कर ज्वाला भड़क रही हो, गगनमण्डल शतघ्नियों और पृथ्वी-मण्डल अग्न्यस्त्रोंसे अस्त-व्यस्त हो रहा हो, वहांके लिये मुरली (वंशी) के साथ बुलाना एक प्रकार की सामयिक अवहेलना है, सुदर्शनचक्रके साथ यदि बुलावें तो ठीक भी है।

पाठकों! आपने इस लेखसे भली प्रकार समझ लिया होगा कि 'निराशा' की कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है, यह केवल आशाका ही विपरिणाम है, जो किसी कार्यकी पूर्ण साधना न होने पर अपना स्वरूप प्रकट किया करती है। यह केवल हृदयकी दुर्बलतासे ऐसा होता है, हम परिमित सी साधना और परिमित समयमें ही अपनी आशालताको फूलती फलती देखनेका व्यर्थ प्रयत्न किया करते हैं। बस, तभी निराशादेवी झट अपने स्वरूपमें आ विराजती है। यह तो रही सिद्धान्तकी बात, परन्तु और जो निराशाकी कोई

स्वतन्त्र सत्ता मानते हैं, हमारी समझमें उनके लिए तो स्नान, भोजन, गमनागमन, शयनासन आदि नैत्यिक आवश्यक कामोंमें भी प्रवृत्त होना कठिन है और किसी फल प्राप्तिके लिए जप, तप, दान, पुण्यादि करना तो निराशावादियोंके मतमें निरर्थक ही है। बस, अब तो ये हमारे निराशावादी न किसी पीरके और न किसी फकीरके; न कुछ कमाना न खाना; न कहीं जाना न आना। कोई बीमार चाहे मरे चाहे जीवे, न किसी वैद्य डाक्टरको दिखाना, न दवाई-बूटी ही खिलाना, यदि इसके विपरीत चले कि निराशावाद या दैववादका भाँडाफोड़ हुआ; इत्यादि।

पाठकों! नवीन निराशावादकी इतिकर्तव्यताको भली प्रकार आपने समझ ही लिया। अब आपकी जैसी इच्छा हो, आशावादी बनें या निराशावादी। जिसमें आप अपना अपने देश और अपनी जातिका कल्याण समझें उसीका अनुसरण करें। विषय बहुत बढ़ गया है अतः फिर कभीके लिए इसे यहीं समाप्त कर आओ विश्वविजयिनी आशादेवी से प्रार्थना करलें—

आशे ! देवि ! नमस्तुभ्यं त्वयेदं सृज्यते जगत्।
त्वयेदं धार्यते नित्यं त्वयान्ते संहरिष्यते॥
योगोभोगोऽथवा रोगः शोको मोहो भयस्तथा।
आशानावमनारुह्य नोत्तीर्यन्ते कदाचन॥

निद्रा-विज्ञानकी कुछ बातें

[लेखक—विद्याभूषण श्री पं० मोहन शर्मा जी विशारद पूर्व सम्पादक 'मोहिनी']

विज्ञानके सूक्ष्मधी आचार्योंने अपनी विविध खोजों द्वारा यह स्पष्ट रूपसे बतलाया है कि यदि कोई मनुष्य ६० वर्ष पर्यन्त अपनी जीवन-यात्रा चलानेकी सामर्थ्य पाता है तो उसकी आयुके प्रायः २० वर्ष सम्पूर्ण रूपसे अचेतन अवस्थामें अर्थात् निद्रादेवीकी सुखमयी गोदमें ही व्यतीत होजाते हैं। वैज्ञानिकोंका यह निर्णय बार बारकी परीक्षा और खोजके आधार पर सत्य सिद्ध हुआ है। अवस्था पाने पर मनुष्य क्रमशः दिनमें रातमें ७ घण्टा पर्यन्त किंवा ६ घण्टा निद्रा लेने पर भी अपनी बाल्यावस्थामें प्रायः २०–२२ घण्टा तक का समय इसी निद्रामें अतिवाहित कर देता है। प्रायः निद्राकी प्रयोजनीयता सीमाहीन होने के कारण हम निद्राके सम्बन्धमें विशेष रूपसे चिन्ता करनेके व्यसनी नहीं हैं और मानव-जीवनके अमूल्य समयका जो एक बड़ा भाग निद्रा लेनेमें समाप्त हो जाता है, उस पर विचार करनेकी हमारी प्रवृत्ति नहीं है। स्वस्थ और निरोगी मनुष्य शैय्याका आश्रय लेने के पांच-सात मिनिटके बीचमें ही निद्राभिभूत हो जाता है या निद्रामें डूब जाता है और शरीर व मनके अस्वास्थ्य रहने पर बिस्तर पर पड़े-पड़े करवटें बदलते तथा जागते हुए नींदके आवाहनमें बहुत समयकी बलि दे देनी पड़ती है।

आरोग्यता सम्पन्न मनुष्यको प्रायः स्वप्न थोड़े दिखाई देते हैं। मनुष्यकी चिन्ता-धारासे स्वप्नोंका सम्बन्ध बताया गया है। चिन्ता और अधीरता मनुष्यको दुर्बलतामें जकड़ रखती है। अतः स्वप्न-दर्शन यथार्थमें मनुष्यके रोग ग्रसित होने तथा अस्वस्थ रहनेका भी ज्वलन्त प्रमाण है। रातमें यदि हम ठीक चैतन्य हो कर स्वप्न लेनेके अभ्यासी बन जाएं तो हम अपनी भक्ति और साधनामें अधिक प्रगति कर सकते हैं। रात्रिमें मानसिक प्राणशक्ति विशेष रूपसे क्रियावान् रहती है। अतः हम चाहें तो स्वप्न पर चेतन हो कर उसकी वेगवती धारा को ही अपनी साधनामें परिवर्त्तित कर सकते हैं। निद्रावस्था

में मानवके हृदयकी स्पन्दन क्रिया मृदु हो जाती है। आंखोंकी पलकें बन्द होते ही दृष्टि चेतना सम्पूर्ण रूपसे विलुप्त हो रहती है। तदुपरान्त प्राण शक्तिका सद्यः लोप होता है और क्रमशः श्रवण तथा स्पर्शनादि इन्द्रियाँ भी शिथिलीभूत हो उठती हैं। निद्रावस्थामें सदैव मानवीय इन्द्रियोंकी चेतना विलुप्त होनेका यह क्रम सर्वथा सुनिर्दिष्ट और सुनिश्चित ही है। वयस्क या अवस्था प्राप्त व्यक्तिके पक्षमें निद्रा भङ्ग होते ही शैय्या त्याग कर एकदम भागदौड़ करना या एकाएक उठ जाना अनुचित और हानिकर बताया गया है। निद्राकी अवस्थामें हृदयकी क्रिया मृदु रहती है, यह हम ऊपर ही कह चुके हैं। अतएव उस क्रियाको पूर्ववत् सचल और वेगवान् बनानेके लिये कुछ समय देनेकी आवश्यकता हुआ करती है।

"The heart at least a minute or two, to read just its action."

एक वैज्ञानिक पत्रिकामें निद्राके सम्बन्धमें इस आशयका लेख प्रकाशित हुआ था कि साधारणतः स्वास्थ्य-सम्पन्न मनुष्य यदि नींदके नशेमें सहसा तल्लीन हो जानेका अभ्यासी नहीं है तो निद्रावस्थामें वह कई बार करवटें बदलता हुआ देखा जाता है। प्रायः १०० मनुष्योंको लेकर परीक्षापूर्वक देखा गया है कि अन्ततः निद्रित अवस्थामें यह करवट बदलनेका क्रम बीस, पच्चीस बार तक चलता है। यदि विस्तर नरम व कोमल हुआ तो उस पर सोये हुए व्यक्तिके आरामका परिमाण भी बढ़ जाता है। अन्य प्रकारके क्षेत्रोंमें यह पार्श्वपरिवर्तनकी संख्या भी वृद्धिको प्राप्त हो जाती है। यह देखा गया है कि कोई तो दाहिने करवट लेट कर निद्राके सुखका उपभोग करते हैं, कोई बाएं करवट लेटनेमें आराम पाते हैं और कोई-कोई उलटे हो कर व चित्त लेट कर सोनेके अभ्यासी रहते हैं। कई तो धनुषके समान मुड़ कर विचित्र रूपसे निद्रा लेतें हैं; किन्तु इस प्रकारसे नींद लेना प्रायः भय से खाली नहीं होता। स्वास्थ्य-विज्ञानके विद्वानोंने निद्रा लेनेके इस विचित्र अभ्यासकी तीव्र निन्दा की है और इसे स्वास्थ्यके पक्षमें नितान्त हानिकारक बतलाया है। कहावत भी है:—

"Worst thing to curl up and buckle in the middle."

अर्थात् ऊपरकी ओर मुड़ कर बीचमें सिकुड़ कर बंध जाना एक बार ही बुरा है। दाहिनी करवट लेट कर सोना हृदयकी आरोग्यताके पक्षमें विशेष रूपसे लाभजनक बताया गया है। इसी भांति बायीं करवट लेट कर सोनेमें हृदयकी कोई क्षति नहीं होती, किन्तु पाकस्थलीमें परिपाक सम्बन्धी दोषोंके उत्पन्न हो जानेकी सम्भावना रहती है। जो लोग बायें हाथका सहारा लेकर सोते हैं या निद्रा लेनेके अभ्यासी हैं वे अजीर्णता या कोष्ठबद्धता जैसे भयङ्कर रोगोंको अपने भविष्यकी घात करनेके लिये निमन्त्रण दे रहे हैं, ऐसा कहना कोई अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं है। कहावत है—"अल्प-निद्रा भयंकरी" अर्थात् थोड़ी नींद स्वास्थ्यके लिये सदैव हानिकारक है। चाहे कितना ही कार्यभार क्यों न उठाना पड़े, किन्तु ६ घण्टे पर्यन्त निद्रा लेना मनुष्यके लिये नितान्त आवश्यक है। जहाँ इस नियमकी अवहेलना हुई — वहाँ शरीर और मनकी अवस्थाओंमें कुछ भी फेरफार हुए बिना नहीं रहता। कहते हैं कि नैपोलियन बोनापार्ट केवल चार घण्टा सोनेका अभ्यासी था। फ्रांसके गाँवों और घरोंमें यह किम्वदन्ती सार्वजनिक रूपसे प्रचलित है। परन्तु इसकी सत्यता स्वीकार नहीं की जा सकती। क्योंकि उसकी जीवनी परसे प्रकट है कि वह यथार्थमें ६ घण्टे तक सोता था, कभी उसने ८ घण्टे तक भी नींद ली थी। और एक बार वह निरन्तर ३६ घण्टे निश्चिन्तता पूर्वक सोया हुआ देखा गया था। नींदके गाढ़े और पतले होनेमें अथवा न्यून या अधिक आनेमें पार्थक्य घटित होता है। यदि १० घण्टा पर्यन्त विस्तर पर लेटे रहनेसे प्रगाढ़ निद्रा न आती हो और अधिक समय तन्द्रामें व्यतीत हो जाय

तो उससे पांच घण्टेकी गहरी निद्रा आना कहीं अधिक स्वास्थ्यकर और सुखदायी है। कितने भी समय तक नींद ली जाए यदि उसमें मिठासक अनुभव हो तो उससे स्वास्थ्यमें कोई दोष उत्पन्न होनेकी सम्भावना नहीं रहती। दूसरी दृष्टिमें अधिक समय पर्यन्त नींद लेना भी ठीक नहीं है। उससे बुद्धि वृत्ति मलीन हो कर वह मनुष्यको दुर्बलचेता बना देती है। आलस्य रूपी शत्रु आठों प्रहर उसके चारों ओर घेरा डाल देता है। संसारके शुभ कर्मोंमें प्रवृत्ति नहीं रह जाती और चित्त एक विचित्र प्रकारकी उदासीमें निमग्न हो जाता है।

"Too much sleep deadens the senses and softens the muscular system."

अर्थात् अधिक निद्रा बुद्धि वृत्तिकी जागृतिका हनन करती है और मांसपेशियोंकी बनावटमें कोमलता तथा कमजोरी पहुँचाती है। कहनेका प्रयोजन यह कि मनुष्यमात्रके लिए अल्प निद्रा सर्वतोभावेन वर्जित है। अङ्गरेजीमें एक प्रवाद है कि—

"Six hour's sleep for a man, seven for a woman, eight for a child and nine for a fool."

अर्थात् पुरुषके लिए ६ घण्टा, स्त्रीके लिए सात घण्टा, बालकके लिए ८ घण्टा और ९ घण्टा किसी मूर्खके पक्षमें निद्रा आवश्यक और अनिवार्य है। यद्यपि आधुनिक विज्ञान इस मतकी पुष्टि नहीं करता। शारीरिक स्वास्थ्य और समूचे दिन भरके परिश्रम के भेदानुसार निद्राकाल में तारतम्य घटित होता है। तथापि यह बात भी ठीक है कि शीतकालमें निद्राका समय वृद्धिको प्राप्त हो जाता है और उसमें मानवीय स्वास्थ्यके हानिकी कोई आशङ्का नहीं रहती।

"One requires more sleep in cold weather than a warm."

अर्थात् किसीको ग्रीष्मऋतुकी अपेक्षा शीतकालमें नींदकी अधिक आवश्यकता हुआ करती है। मानव जीवन-तत्त्वसे निद्राका अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है। निद्रा कब लेनी चाहिए? क्यों लेनी चाहिए? और कितनी लेनी चाहिए? इन प्रश्नों पर जो लोग सम्यक् रूपसे विचार नहीं करते और निद्रा-विज्ञानके नियमों का उल्लङ्घन करते हैं; उनका स्वर्ण जैसा शरीर भविष्यत् में नाना रोगोंका आवास स्थल बन जाता है और उनकी आयु मर्यादा भी क्षीण होने लगती है। मनुष्य मात्रके पक्षमें विवेकमय, स्वास्थ्यपूर्ण और सुखका जीवन व्यतीत करनेके लिए निद्राके नियमोंकी जानकारी प्राप्त करना नितान्त आवश्यक है। पश्चिमी देशों के वैज्ञानिक आये दिनों निद्रा-विज्ञानके सम्बन्धमें नई नई खोजों द्वारा अपने देशोंको अनुप्राणित कर रहे हैं। हमारे प्राचीन भारतके ऋषि महर्षियोंने जहाँ जीवन-तत्त्वको सम्पूर्ण रूपसे जाननेकी सामर्थ्य प्राप्त की थी, वहाँ इस निद्रा-विज्ञानके सम्बन्धमें भी अपने आश्चर्यजनक अनुभवोंको संसारके लाभार्थ सर्वसाधारण पर प्रकट करा दिया था। किन्तु वर्त्तमान कालमें जीवनकी एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता इस निद्रा तत्त्वके विषयमें हम अनेक दृष्टियोंसे असावधानताका परिचय दे रहे हैं अथवा निद्रा-विज्ञानको एक उपेक्षणीय विषय मानते हैं। पर यह हमारी नितान्त भूल है और इसीके फलस्वरूप हमने अपना स्वास्थ्य-सुख और ऐश्वर्य भी बहुत कुछ नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। आशा है कि इस नव-जागरण, नवीन स्पन्दन और अभिनव सन्देश-वहनके चमत्कारी युगमें स्वास्थ्य रक्षाकी दृष्टिसे निद्रा विज्ञानको ठीक ठीक समझनेकी आतुरताका हममें अवश्य ही उदय हो कर रहेगा और भारत सन्तान पूर्वकालीन भारतीयोंकी ही भाँति दीर्घ जीवनकी उलझी हुई समस्याको सुलझानेमें पूर्णतः सक्षम हो जावेगी। एवमस्तु।

शिवरात्रि

[लेखक—राजकुमार गुरु श्री पं० तारादत्तजी राजज्यौतिषी ज्यौतिषालङ्कार]

समय विभागोंके अन्तमें शक्तियोंका भी अन्त होता है। पूर्णमासीके अन्तमें पूर्णिमान्त मास और शुक्लपक्षका अन्त होता है। अमावस्याके अन्तमें अमान्तमास और कृष्णपक्षका अन्त होता है। अतएव इन दोनों तिथियोंमें शक्तियोंका नाश होता है। "कार्यके-आविर्भावसे पूर्व कारणका आविर्भाव होता है।" इस नियमके अनुसार नाशसे पूर्व नाश करने वाली शक्तियों तथा उनके अधिष्ठाता भूतादि भयङ्कर प्राणियोंका आविर्भाव होता है। जहाँ उपद्रवियोंका आधिक्य होता है वहाँ नियामकका भी प्रवेश आवश्यक होता है। इस लिए चतुर्दशी तिथिमें भूतादियोंके नियामक भक्त वत्सल श्री शिवजी भी रक्षार्थ प्रकट होते हैं। "अस्ति माहेश्वरी शक्ति सर्व भूत नियामिका" (पंचदशी)

पौर्णिमासीके दिन चन्द्रमा पूर्ण होता है और अमावस्याके दिन क्षीण। इस लिए पौर्णमासीसे अमावस्या विशेष रूपसे क्षय तिथि है। अतएव कृष्ण चतुर्दशीमें शुक्ल चतुर्दशीकी अपेक्षा विशेष रूपसे उपद्रव करनेवाले भूतादियोंका तथा उनके नियामक श्री शिवजीका भी आविर्भाव सिद्ध होता है।

जिस प्रकार क्षय तिथिसे पूर्व तिथि चतुर्दशी शिव तिथि है। उसी प्रकार अन्त्य माससे प्रथम मास भी शिव मास है। फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदासे चैत्रामावास्या तक त्रिंशद्दिनात्मक अन्त्य मास है। अत एव माघ शुक्ल प्रतिपदासे फाल्गुनामावस्या तक अन्त्य माससे प्रथम मास हैं। इस लिए फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशीमें शिवजी विशेष रूपसे विश्व रक्षार्थ प्रकट होते हैं। इस प्रकार शास्त्रोक्त शिव-रात्रि व्रत युक्तिसे भी दृढ होता है।

जयसिंह कल्पद्रुममें स्कंदपुराणका वाक्य—

निशि भ्रमन्ति भूतानि शक्तयः शूलभृद्यतः।
अतस्तस्यां चतुर्दश्यां सत्यां तत्पूजनं भवेत् ॥

निशि भ्रमन्ति विचरन्ति। भूतानि पिशाचायदयः। शक्तयः देव्यः। शूलभृच्छिवः। अतस्तस्यां चतुर्दश्यां भूत शक्ति शिवानां पूजनम्।

नागर खण्डे—

माघमासस्य कृष्णायां चतुर्दश्यां सुरेश्वर !।
अहं यास्यामि भूपृष्ठे रात्रौ नैव दिवा कलौ ॥
लिङ्गेषु च समस्तेषु स्थावरेषु चरेषु च।
संक्रमिष्याम्यसंदिग्धं वर्ष पाप विशुद्धये ॥

इस लेखका साररूप स्वनिर्मित श्लोक—

यतः क्षयोऽन्तेऽन्त्यतिथौ तत क्षय-
स्तथाद्य तिथ्यां क्षयहेतु संभवः।
नियामकस्यापि शिवस्य सा तिथि-
रुपान्त्यमासस्य तथेश मासता ॥ १ ॥

❀ होलिका ❀

[लेखक— महामहोपाध्याय श्री पं० गिरिधर शर्मा जी चतुर्वेदी]

होली हिन्दुओंका प्रसिद्ध पर्व (त्यौहार) है। संस्कृतमें इसका नाम 'होलिका' वा 'होलाका' कई जगह आया है। विद्वानोंमें ऐसी प्रसिद्धि है कि ब्राह्मणादि चारों वर्णोंके क्रमसे 'श्रावणी' 'विजया-दशमी' 'दीपावली' और 'होली' ये चारों मुख्य पर्व (त्यौहार) हैं। इस क्रमसे यह शूद्रोंका मुख्य पर्व (त्यौहार) माना जाता है। किन्तु प्रत्येक त्यौहारमें एक एक वर्णकी प्रधानता रहने पर भी अन्य सभी वर्ण अपने भाई उस वर्णके साथ मिलकर सब त्यौहारोंको मनाते हैं, इस लिये होली भी हिन्दूमात्रका जातीय त्यौहार है। यह प्रसिद्धि यद्यपि बिना आधारकी नहीं है, इसमें बहुत कुछ सत्यता है, किन्तु इतना कहना ही पड़ता है कि हमारे कई एक शास्त्रीय और सदाचार सिद्ध अनुष्ठानोंका होलीके साथ सम्बन्ध है। होली कई एक पर्व उत्सव और श्रौत स्मार्त्त कर्मोंका एक समूह है, जिसमें कालक्रम-से रूपान्तर होते-होते भिन्न-भिन्न कर्मोंके कुछ-कुछ चिह्न मात्र शेष रह गये हैं। वे सब ही कर्म्म केवल शूद्रोंसे ही सम्बन्ध नहीं रखते, किन्तु कई एकका मुख्य सम्बन्ध द्विजातियोंसे ही है। आज इस छोटेसे लेखमें संक्षेपसे यही दिखाना है कि होलीकी 'इति कर्तव्यता' में किन-किन कर्मोंके सम्बन्धका आभास मिलता है।

(१) वेदका मुख्य प्रतिपाद्य कर्म्म यज्ञ है। उस श्रौत-यज्ञके मुख्य तीन भेद हैं:— १ इष्टि, २ सोम और ३ चयन। इसमें 'इष्टि'—अग्निहोत्र, दर्श पौर्ण-मास और चातुर्मास्य आदि भेदसे अनेक प्रकारकी है। चातुर्मास्य उन यज्ञोंका नाम है जो चार-चार महीनोंके अन्तरसे वर्षमें चार बार किये जाते हैं। वैसे तो ऋतु ६ मानी गई हैं, किन्तु दो-दो ऋतुओंमें समय प्रायः एकसा रहता है, इसलिये प्रधान ऋतु (मौसम) तीन ही हैं—गर्मी, वर्षा और शीत। इनकी सन्धिमें एक-एक चातुर्मास्य यज्ञ (इष्टि) का विधान श्रुतिमें है। फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमाके दूसरे दिन गरमीके आरम्भका चातुर्मास्य याग होता है, यहींसे वर्षका आरम्भ है, इसलिये यह प्रथम चातुर्मास्य याग है—जिसका कि नाम 'वैश्वदेव' है। आषाढ़ी पूर्णिमाके दूसरे दिन 'वरुण-प्रघास' नामका दूसरा चातुर्मास्य होता है। कार्तिकी पूर्णिमाके दूसरे दिन 'शाकमेध' नामका तीसरा और फाल्गुनके मध्यमें समाप्तिका 'शुना-सीरीय' नामका चौथा चातुर्मास्य और करते हैं। इस प्रकार यह फाल्गुनी पूर्णिमा चातुर्मास्य यज्ञके आरम्भका प्रधान समय है। कहना नहीं होगा कि इस यज्ञका सम्बन्ध द्विजातियों-से ही है।

(२) नवीन अन्न उत्पन्न होने पर जबतक वह यज्ञ द्वारा देवताओंको अर्पण न किया जाय, तबतक अपने काममें नहीं लिया जा सकता—यह आर्य जातिका प्राचीन धर्म विश्वास है। हिन्दुओंका पवित्र भाव है कि कृषिसे जो अन्न हमें मिलता है, वह देवताओंका दिया हुआ है। उनके दिये हुएकी भेंट पहले उन्हें देना आवश्यक है। "भगवद्गीता" में आज्ञा है कि—

'तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो भुंक्ते स्तेन एव सः।'

अर्थात् देवताओंके दिये हुएको बिना उनकी भेंट किये जो स्वयं खा लेता है—वह चोर है। इसलिये जब-जब नया अन्न उत्पन्न हो, तब-तब एक इष्टि (यज्ञ) होती है जिसका नाम श्रौत-सूत्रोंमें 'आग्रायणेष्टि' है। यह वर्षमें तीन बार की जाती है। भदई धान या श्यामाक आदि मुन्यन्न उत्पन्न होनेके

समय भाद्रपदमें धान, मक्का, बाजरा आदि उत्पन्न होनेके समय कार्तिक या मार्गशीर्षमें और यव गोधूम आदि उत्पन्न होनेके समय फाल्गुन वा चैत्रमें। इसका समय भी फाल्गुनकी पूर्णिमा है। जिन द्विजोंने श्रौत अग्निहोत्र न लिया हो, वे निरग्नि कहाते हैं। निरग्नि द्विजातियोंके लिए भी गृह्य-सूत्रोंमें इस नवीन अन्न उत्पन्न होनेके समयमें एक स्मार्त्त इष्टिका विधान है, जिसे 'नवान्नेष्टि' या 'नवान्न-प्राशन' नामसे कहा गया है। किसी भी प्रकार हो, नवीन अन्नका पहले होम करना आवश्यक समझा गया है। यह कर्म भी हमारे 'होलिका' के त्यौहारमें ही आजकल मिला हुआ है। इसका इतना ही चिह्न शेष रह गया है कि होलीकी ज्वालामें गेहूँ जौ आदिकी बालें सेक ली जाती हैं। इस स्मार्त्त कर्मका सम्बन्ध भी प्रधान रूपसे द्विजातियोंसे ही है।

(३) पौराणिक आख्यान प्रसिद्ध है कि 'हिरण्य-कशिपु' दैत्यकी बहन जिसका नाम 'होलिका' था, वह हिरण्यकशिपुकी आज्ञासे प्रह्लादको गोदमें लेकर उसे जलानेके लिए अग्निमें बैठी थी, किन्तु जगत्के एक-एक अणुमें ईश्वरको देखनेवाला ईश्वर-भक्त प्रह्लाद न जला और 'होलिका' जल गयी। इस पवित्र अलौकिक घटनाकी स्मृतिमें आज भी ईश्वर विश्वासी आर्यावर्त्त निवासी 'होलिका' को जलाते हैं, और अग्नि ज्वालाके बीचमेंसे प्रह्लादके प्रतिनिधि एक वृक्षको निकाल कर जलाशयमें ठण्डा कर देते हैं। उसी वृक्षको प्रह्लादका प्रतिनिधि मानकर पहले पूजा भी करते हैं। यह पौराणिक अनुष्ठान है, और इसका भी सम्बन्ध सभी वर्णोंसे है।

(४) भविष्य-पुराण (उत्तर पर्व १३२ अध्याय) में एक दूसरे प्रकारका भी उपाख्यान है। 'माली' नामके राक्षसकी पुत्री एक 'ढुण्ढा' या 'ढौण्ढा' नामकी राक्षसी थी, उसने बड़ी तपस्या करके शिवसे वर प्राप्त किया, जिससे वह शस्त्र-अस्त्रों द्वारा अवध्य हो गयी। वह उन्मत्त (असावधान) और बालकोंको सताने लगी, विशेषकर ऋतुकी सन्धिमें उसकी पीड़ा होती थी। उसका नाश किसी अस्त्र, शस्त्र, मन्त्र, औषध आदिसे न होता था। सत्य-युगमें रघुके राज्यमें सब प्रजा इससे बहुत आर्त्त हो कर राजाके पास पुकारी, तो राजाने अपने गुरु पुरोहित वशिष्ठजीसे इसका उपाय पूछा। उन्होंने यही उपाय बताया कि "फाल्गुनकी पूर्णिमाके दिन—जब कि शीत समाप्त होता है और गरमीका प्रारम्भ होता है—सब मनुष्य, विशेषकर बालक बड़े उत्साहसे काष्ठके बने हुए खड्ग आदि शस्त्र लेकर योद्धाओंकी भांति विचरें। सूखे काष्ठ और उपलोंका बहुत बड़ा ढेर लगाया जाय, सायंकाल उसमें अग्नि लगा कर, राक्षस विनाशक मन्त्रोंसे हवन किया जाय। उस अग्निकी सब लोग तीन प्रदक्षिणा करें, और उस समय 'अड़ा' 'अड़ा' आदि ऊंची आवाजसे शब्द करें व यथेच्छा भाषण करें। सायङ्काल घरमें व आंगनमें गोबरसे चौका लगाना, छोटे बालकोंको घरमें रखना, काष्ठकी तलवार लिये हुए हास्यरसके गीत गाते हुए कुमारोंसे उनकी रक्षा करना व उन कुमारोंको गुड़, पक्वान्न मिठाई आदि बांटना चाहिये। छोटे बालकोंकी उस रात्रिको विशेष रक्षा करनी चाहिये। इससे इस राक्षसी की पीड़ा मिटेगी।" निदान वैसा ही किया गया, उससे प्रजामें शान्ति हुई, और तबसे सदाके लिए यह विधि चल पड़ी। 'अड़ा' 'अड़ा' शब्दके कारण उस राक्षसीका नाम 'अड़ाड़ा' है, शीत और उष्णके बीच में होनेके कारण 'शीतोष्णा' है और होमके कारण यह पर्व 'होलिका' नामसे प्रसिद्ध हुआ है, इत्यादि।

ये सब काम आज भी होलिकाके दिन होते हैं। काठके खड्ग (खांडे) गोबरकी ढाल आदि बनाई जाती हैं। अग्नि प्रज्वालन, अग्नि प्रदक्षिणा यथेच्छ भाषण आदि सब ही कुछ होता है। 'डफ' आदि बाजों पर ऊंचे स्वरसे हास्यरस प्रधान गायन भी खूब प्रसिद्ध है। यथेच्छ भाषण अशिक्षा और कुशिक्षाके योगसे अश्लील भाषणके रूपमें परिणत हो गया है। राक्षस विनाशक मन्त्रोंसे हवन तो नहीं होता, किन्तु धूप देकर गण्डे तावीज आदि बालकोंके गलेमें बांधनेका प्रचार है। वस्तुतः इस पौराणिक विधानका सम्बन्ध विज्ञानसे प्रतीत होता है। शीत कालका

सञ्चित कफ वसन्तकी गरमी पाकर पिघलता है। उसके कीटाणु सब शरीरमें फैल कर नाना रोग उत्पन्न करते हैं। यह ऋतु कफ रोगोंके लिये आयुर्वेद में वा लोकमें सुप्रसिद्ध है। विशेषकर बालकोंको भिन्न-भिन्न प्रकारके रोग इस ऋतुमें होते हैं। घरोंमें भी शीत कालमें पूरी गरमी न पहुंचनेके कारण कई प्रकारके कीटाणु अपना स्थान बना लेते हैं, जो कि कई प्रकार की हानि करते रहते हैं। शरीरमें उत्साह लाना, कूदना, फांदना, अग्नि जला कर उसके पास रहना, ऊंची आवाजसे गाना आदि सब ही काम कफ के निवर्तक हैं। मिष्टान्नमें गुड़की प्रधानता भी कफकी निवृत्तिके लिये ही बताई गई है। घरोंको स्वच्छ रखना, गोबरसे लीपना, अग्निकी ऊंची ज्वाला ये सब विधि भी कीटाणुओंकी विनाशक है। इन वैज्ञानिक अनुष्ठानोंसे कफरोगोंकी निवृत्तिमें किसीको सन्देह नहीं हो सकता। हास्य प्रधान गायन, यथेच्छ भाषण भी इसी आधार पर रक्खा गया है कि मनुष्य स्वभावतः ऐसे विषयोंको ऊंचे स्वरसे बोलता है। उत्साह-जनित उच्चैः स्वर कफ हटा कर फेफड़ोंको साफ करेगा। इस वैज्ञानिक अनुष्ठानका सम्बन्ध भी सभी वर्णोंसे है और पुराणोंमें भी सबके ही लिये यह विधान है। चारों वर्णों के उपयुक्त क्रियाएं भी इसमें स्पष्ट मिलती हैं। रक्षोघ्न मंत्रोंसे हवन ब्राह्मण वर्णोचितकार्य है, शस्त्र अस्त्र ले कर घूमना क्षत्रियजनोचित, मिठाई आदिका आयोजन वैश्यजनोचित व यथेच्छ-भाषण आदि शूद्रजनोचित कार्योंका इसमें समावेश विद्यमान है। इन वैज्ञानिक क्रियाओंकी ही इस त्यौहारमें प्रधानता है।

(५) चैत्रसे नये संवत्सरका प्रवेश भारतवर्षमें सुप्रसिद्ध है। यद्यपि आजकल चैत्र शुक्ल प्रतिपदासे नये वर्षका आरम्भ माना जाता है, किन्तु अनुमान यह है कि किसी देश कालमें चैत्र कृष्ण प्रतिपदा भी सम्वत्सरारम्भकी तिथि मानी जाती होगी। अमान्त और पूर्णिमान्त दोनों प्रकारके मास शास्त्रमें प्रसिद्ध हैं, तब पूर्णिमान्त मासके अनुसार चैत्र कृष्ण प्रतिपदा भी वत्सरारम्भकी तिथि होनी चाहिए। दूसरे वसन्त ऋतुका प्रारम्भ चैत्र बदि प्रतिपदासे ही सब ग्रन्थकार मानते हैं और वसन्तऋतु वर्षका आरम्भ है; तब चैत्र बदी प्रतिपदाको वर्षारम्भ इससे भी सिद्ध हो जाता है। 'ब्राह्मणों' में फाल्गुनी पूर्णिमाको सम्वत्सरका मुख कहा है, इससे भी चैत्र बदि प्रतिपदाका वर्षारम्भ तिथि होना निर्विवाद है, अस्तु। फाल्गुनकी पूर्णिमाको पहला वर्ष समाप्त हो गया, अर्थात् वह वर्ष मर गया, इसलिए उसे जला देना चाहिए। इस विचारसे भी अग्नि प्रज्ज्वालन होलीके दिन होता है। सम्वत् जलानेकी प्रसिद्धि भी कई प्रान्तोंमें है। सम्वत् जलानेकी प्रथाका अनुमान इससे भी दृढ़ होता है कि पञ्जाबमें मकर संक्रान्तिके पूर्व दिन— जिसे 'लोढ़ी' कहते हैं, उस दिन होलीकी भाँति ही अग्नि जलानेकी प्रथा है। वहाँ मकर संक्रान्तिसे वर्षारम्भ माननेकी प्रथा रही होगी, इसीसे पूर्व दिन, पूर्व वर्षको जलाने की प्रथा चल पड़ी। इसका शास्त्रीय आधार तो दृष्टिगत नहीं हुआ, किन्तु सदाचार सिद्ध यह प्रथा अवश्य है।

(६) वसन्त ऋतु सम्भवतः उन्मादक है। शीतकाल में प्रकृति सबको बल देती है। शक्ति सञ्चित होने पर उसका प्रेमरूपसे प्रस्फुटित होना प्राकृतिक है। हमारे शास्त्रोंमें वसन्तको कामदेवका मित्र इसी आधार पर कहा गया है। संस्कृत-साहित्यके कवि-कुलगुरु कालिदासने वसन्तका प्राकृतिक चित्र खींचते हुए खग, मृग, वृक्ष, लता आदिका भी इस ऋतुमें प्रेमपाशबद्ध होना चित्रित किया है। इसी प्रेमोन्मादको पूर्ण चरितार्थ करनेका हिन्दू जातिमें एक दिन नियत है— चैत्र कृष्ण प्रतिपदा। वही वसन्तारम्भका दिन है। उस दिन बड़े, छोटे, धनी, दरिद्र, ऊंच, नीच, जाति-पाँति सब भेद-भाव भुलाकर सब आपसमें मिलें, प्रेम-मय मधुर भाषण करें, प्रेम चिह्नके रूपमें एक दूसरे पर रङ्ग छोड़ें। इस दिन चाण्डाल तकका स्पर्श करने की शास्त्रमें स्पष्ट विधि है। चाण्डाल भी हिन्दू जाति का एक अङ्ग है वह यह न समझे कि मेरे साथ कोई प्रेम नहीं करता, इसलिए स्नानसे पूर्व चाण्डालका स्पर्श करके स्नान करनेकी विधि उस दिन रक्खी गई है

और उसका फल माना गया है। प्रेमोन्मादके कारण ही हंसी मजाक और यथेच्छ भाषणको भी उस दिन स्थान दिया गया है। आज कलके सभ्य देशोंके जो सभ्य हमारी होलीकी हंसी उड़ाते हैं, उनके देशमें इस वसन्तऋतुमें 'एप्रिलफूल' के नामसे क्या क्या होता है—इस पर उनकी दृष्टि नहीं जाती। हाँ, हिंन्दूजाति की यह विशेषता है कि इनके पर्व उत्सव प्रदर्शनमें धनिक दरिद्रोंका भेदभाव नहीं रहता, अस्तु। इस विधि में शूद्रोंकी प्रधानता है। द्विजाति लोग धीरताके कारण उन्मादके इतने वशीभूत नहीं होते, जितने कि शूद्र। इस लिए शूद्रोंकी इसमें प्रधानता रखकर द्विजातियोंका उनके साथ प्रेमप्रदर्शन इस विधानमें मुख्य है।

वसन्तोत्सव और कामदेव पूजाकी भी प्रतिपदाके दिन शास्त्रमें विधि है। दक्षिणमें यह उत्सव 'मदन महोत्सव' के नामसे ही प्रसिद्ध है। स्वच्छ वस्त्र पहनकर स्वच्छ स्थानमें सबका बैठना, चन्दन, रोली, गुलाल आदि लगाना और आम्र-मञ्जरीका आस्वादन करना इस विधानमें मुख्य है। वह चन्दन गुलाल ही अशिक्षाके पुटसे कीच उछलने तक पहुँच गई। होलिकाकी भस्मका वन्दन करना भी शास्त्रमें विहित है, इस विधिने भी राख धूल उछालनेकी प्रथामें सहायता पहुँचाई है।

(७) देवीपूजा, हिण्डोलेका उत्सव आदि तन्त्र-शास्त्रोक्त कई विधान भी प्रतिपदाके शास्त्रोंमें मिलते हैं—जो कि भिन्न-भिन्न प्रदेशोंमें प्रचलित भी हैं, उनका विस्तार भयसे यहाँ विवेचन नहीं किया जाता

होलीका त्योहार बहुत पुराना है। मीमांसाके भाष्यकार शबर स्वामी आदिने सदाचारका मुख्य उदाहरण इसे ही रक्खा है, और पूर्वके प्रदेशोंमें इसका विशेष प्रचार बताया है। हिन्दूजातिको अपने इस जातीय त्योहारकी यथाशक्ति रक्षा करनी चाहिए, किन्तु अशिक्षाके कारण प्रवृत्त कुरीतियोंको निकालकर इसे शास्त्रानुकूल उत्तम रूप पर लानेका प्रयत्न भी करना चाहिए। जिससे कि जातिका कल्याण हो और जातिमें जीवन प्राप्त हो।

होलिका

[लेखक— श्री पं० विशुद्धानन्द जी गौड़ ज्यौतिषाचार्य]

रञ्जयन्ती सदा मानसं मंजुला भञ्जयन्ती गतिं दुःख दारिद्र्यजाम्।
मोदयन्मण्डलं वर्तयन्ती मुदा राष्ट्रमानन्दयेन्नश्शुभं होलिका ॥

हमारी राष्ट्रिय स्नेह सम्वर्द्धिका होलिका (पर्व) सदा ही मन को रञ्जित करती हुई, दुःख एवं शोक तथा दारिद्र्यगतिको नष्ट करती हुई, हर्ष के साथ प्रसन्नता और सब प्रकारसे आनन्द मण्डलको प्रदान करती को हुई हमारे समग्र शुभ राष्ट्रे आनन्द प्रदान करे।

दैवज्ञकी दृष्टिमें संसार-चक्र

सन् १९४४ ई० का भविष्य

[लेखक—श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी, सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

'श्रीस्वाध्याय' के गताङ्कोंमें इन्हीं स्तम्भोंमें भविष्यके सम्बन्धमें जो विचार हम प्रकट कर चुके हैं उनकी सत्यताका अनुभव विज्ञ पाठक भली-भांति कर रहे हैं। हमारा मत अब भी वही है जो पहले था। गताङ्कोंमें हम स्पष्ट कर चुके हैं कि युद्ध अभी शीघ्र समाप्त नहीं होता और न संसारमें शीघ्र शान्ति स्थापित होनेवाली है; तथा निकट-भविष्यमें भारतकी राजनैतिक आर्थिक और सामाजिक स्थितिमें विशेष सुधार होनेकी आशा भी नहीं है।

इस समय भी कई आशावादी भारतीय देशबन्धु यह आशा लगाये बैठे हैं कि अब परिस्थिति अनुकूल होती जा रही है। युद्ध शीघ्र इसी वर्षमें समाप्त हो जायगा और श्री० गांधीजी आदि सब नेता मुक्त कर दिये जावेंगे, तथा भारतको बहुत कुछ अधिकार प्राप्त हो जावेंगे, इत्यादि।

किन्तु ग्रहपरिस्थिति हमें इन आशावादियोंके विरुद्ध दिखाई दे रही है। अभी पौष शु० ५ को रात्रिके १२ बजेसे जो नवीन सन् १९४४ ई० आरम्भ हो रहा है। इस समयकी लग्न कुण्डली और गत ता० २१ अक्टूबर कार्तिक कृष्ण ८ गुरुवारको प्रातः स्टे. टा. १०।१५ पर नये वायसराय श्री० वाईकाउण्ट वेवल महोदयने भारतका शासनसूत्र अपने हाथोंमें ले कर शपथ ग्रहण की उस समयकी ग्रहस्थितिका सम्यक्तया विचार करनेसे प्रतीत होता है कि समस्त खृष्ट (ईसाई) संसार और भारतका वर्तमान सङ्कट अभी (सन् १९४४ में) न्यून होनेकी अपेक्षया अधिक बढ़ेगा। अष्टमेश गुरु लग्नमें और लग्नेश सूर्य पञ्चममें स्थित हो कर दशमस्थ मंगल शनि हर्शलसे मृत्यु-षडष्टक योग कर रहा है; यह समस्त ईसाई एवं म्लेच्छजगत् विशेषतः (शनिके कारण) पश्चिमी भूभागके जनपदोंमें भयङ्कर विनाश करेगा। पश्चिमी लोगोंका मन और बुद्धि भूताविष्टोंकी भांति उन्मत्त या विवेक-शून्य हो जावेगी जिससे वे अपने हानि-लाभका भी भली-भांति निर्णय न करके राष्ट्रको महान् आपत्ति एवं अवनतिके गहरे गर्त्तमें गिरानेके लिए सहायक सिद्ध होंगे।

युद्धप्रिय (संहारकारक) ग्रह शनि मंगल वक्री हो कर दशम (राज्यस्थान) में बैठे हैं और आगे फाल्गुन शुक्लमें इन्हीं दोनों ग्रहोंका नभोमण्डलकी वृषभराशिमें युद्ध होनेवाला है अतः भूमण्डल पर वर्तमान महायुद्ध भयङ्कर उग्ररूप धारण करेगा, जल-युद्ध और व्योमयुद्धकी भयङ्करता बढ़ेगी। पश्चिमी यूरोप तथा पूर्वीय एशिया एवं प्रशान्त-महासागरमें युद्धकी भयङ्करतासे जन-धनका भारी संहार होगा। पहले पौष शुक्लमें मंगल हर्शलकी युति हो रही है और आगे फाल्गुन शुक्लमें शनि मंगलका युद्ध (युति) हो रहा है. यह दोनों ही संसारके लिए अनिष्ट सूचक हैं।

मंगल शनि और मंगल हर्शल युतिका फल

आधिदैविक आधिकभौतिक उपद्रव अधिक हों। युद्ध अग्निप्रलय असन्तोष दुर्भिक्ष सन्ताप क्षोभ भयानक घरेलू झगड़े साम्प्रदायिक संघर्ष और सेना सम्बन्धी उलटफेर अधिक हों। किसी-किसी प्रदेशमें शीत अधिक पड़ने और कहीं-कहीं वर्षाकी न्यूनता

और कहीं अधिक वर्षा ओले आदिसे खेतीकी बहुत हानि होगी। बड़े-बड़े राष्ट्रोंमें रक्तपात मारधाड़ पारस्परिक कलह असन्तोष सामूहिक गत्यवरोध (हड़ताल) रोगवृद्धि और राजवर्गमें वा उच्चाधिकारियोंमें मृत्युकी भी सम्भावना है। प्रचलित महायुद्ध उग्ररूप धारण करे। वायुप्रकोप शीताधिक्य हिमपात तथा कभी-कभी कहीं भूकम्प भी होंगे। इन अशुभ युतियोंका अनिष्ट परिणाम बहुत दिनों तक होता रहेगा। ईरान, क्रीमिया, प्रशिया, रूस, स्वीडन, अफ्रिका, तुर्कस्थान, अरब, इंगलेण्ड, अमेरिका, जर्मनी, जापान, अबीसीनिया, आयरलेण्ड, आस्ट्रेलिया, स्पेन आदि बाहरके प्रदेशों और भारतमें ब्रह्मदेश, बंगाल, बिहार, आसाम, बम्बई, मद्रास, सूरत, दिल्ली, शोण, नर्मदा, भीमरथीका पश्चिमी प्रदेश, वेत्रवती (बेतवा) गोदावरीके बीचके प्रदेश, सह्यपर्वत तथा विन्ध्यपर्वत और कावेरीनदीके आसपासके प्रदेश, विदेह (मिथिला) आन्ध्र (तैलङ्ग) अश्मक कुन्तल (महाराष्ट्रका कुछ प्रदेश) केरल (ट्रावन्कोर कोचीन आदि) इन सब प्रदेशों तथा नागरिक लोग, किसान, व्याध, व्यापारी, अग्निजीवि, शस्त्रधारी, दम्भी, पाखण्डी, झूठ बोलनेवाले और मादकद्रव्य सेवन करनेवालों पर इन युतियोंका बुरा प्रभाव पड़ेगा।

इन तीन मासोंके अशुभ योग

(१) पौष शुक्लमें शुक्रके अतिरिक्त सभी तारा ग्रह वक्री हो गये हैं, यह दुर्भिक्ष और राजविग्रह कारक हैं। यथा—

यत्र मासे ग्रहाः सर्वे वक्रत्वं यान्ति दैवतः।
तन्मासेऽतिमहर्घस्याद्धान्यं वा राजविग्रहः॥

(२) पौष शु० ११ को कृत्तिका नक्षत्र आगे लाल रङ्गकी प्रत्येक वस्तुओंकी महंगाईकी सूचना दे रहा है। यथा—

पौषसुदी एकादशी कृत्तिका नक्षत्र होय।
लालवस्तुसे लाभ हो संशय करो न कोय॥

(३) पौष शु० १३ को शनिवार है। यदि इस दिन वर्षा भी हो जावे तो आगे गेहूँ और लालरङ्गकी वस्तुएं बहुत तेज हो जावेंगी। पाठक इस दिन वर्षाका अवश्य ध्यान रक्खें। जिस प्रान्तमें वर्षा अधिक होगी उस प्रान्तमें उक्त वस्तुओंकी महर्घता भी अधिक रहेगी। लिखा भी है—

पौषसुदी तेरस दिना भौम शुक्र शनिवार।
इस दिन वर्षा होय तो जान लेऊ नरनार॥
गेहूँका सञ्चय करो होगा लाभ विशेष।
लालवस्तुसे लाभ हो इसमें मीन न मेष॥

(४) माघ मासमें पाँच मंगलवार प्रजामें भय और दुर्भिक्षके द्योतक हैं। यथा—

माघमासमें पाँचरवि पाँच भौम शनिवार।
भय उपजै दुर्भिक्ष हो ऐसा लेऊ विचार॥

(५) माघ कृष्ण ३० मंगलवार राजयुद्धकारक है। यथा—

माघवदी मावसको जानो। या पूनोंका योग बखानो॥
इस दिन भौम शनि जो होई। राजा युद्ध करै सब कोई॥

(६) माघ सुदी ३ शुक्रवारी भी भङ्कर युद्ध करानेवाली है।

माघसुदी जो तीजको शुक्र शनि हो वार।
राजोंमें क्रोधाग्निसे युद्ध मचै भरमार॥

(७) माघ सुदी चौथ शनिवारी धान्यनाश दुर्भिक्ष और चौर अग्नि तथा मृत्यु भयादि पीड़ाकारक है—

चतुर्थी माघमासस्य शनिवारेण संयुता।
दुर्भिक्षं मृत्युचौराग्निर्भयं धान्यविनाशनम्॥

(८) माघ सुदी सप्तमी सोमवारी संसारमें महान् दुर्भिक्ष और भयङ्कर विग्रह (राजाओंमें युद्ध) कारक है।

सप्तम्यां सोमवारःस्यान्माघे पक्षे सिते यदि।
दुर्भिक्षं जायते रौद्रं विग्रहोऽपि च भूभुजाम्॥

(९) फाल्गुन सुदी अष्टमीको कृत्तिका नक्षत्र नहीं है, यह योग आगे उन्हाली (रबी) की फसलके लिए हानिकारक है।

माघे शुक्ले यदाऽष्टम्यां कृत्तिका यदि नो भवेत्।
फाल्गुने रोलिकापातः श्रावणे वा न वर्षणम्॥

(१०) फाल्गुन सुदी अष्टमीको रोहिणी नक्षत्र है। यह आगे अल्पवृष्टि और अन्नकी महंगाईको सूचित करता है।

कुम्भमीनान्तरेऽष्टम्यां नवम्यां दशमी दिने।
रोहिणी चेत्तदा वृष्टिरल्पांमध्याऽधिका क्रमात् ॥
कुम्भमीनके अन्तरे अष्टमी रोहिणी होय।
द्विगुणा तिगुणा चौगुणा अन्न जो महँगा होय ॥

(११) चैत्रवदी पञ्चमीको बुधवारका होना आगे गेहूँ और घृतकी महंगाईका द्योतक है—

चैत्रवदी जो पञ्चमी भौम और बुधवार।
गेहूँ घृत महँगा बिकै ऐसा शकुन विचार ॥

सारांश—

संक्षेपमें सारांश यह है कि सन् १९४४ ई० में संसारकी दशा अत्यन्त खराब होगी। यूरोप एशिया एवं प्रशान्तके द्वीपोंमें भयङ्कर युद्ध और राज्यक्रान्ति होगी। पक्ष विपक्षकी ओरसे नये नये भयङ्कर विनाशकारक शस्त्रास्त्रोंका प्रयोग होगा जिससे कई बड़े बड़े नगर प्रधान जनपद और व्यावसायिक केन्द्र नष्ट भ्रष्ट होंगे। महायुद्धकी ज्वालासे समस्त संसार संत्रस्त हो कर शान्तिकी कामना करेगा परन्तु साम्राज्यवादी शासकों और डिक्टेटरोंकी दूषित मनोवृत्तिके कारण शान्तिप्रिय युद्धविरोधी राष्ट्र भी इस महाभारत से अछूते न रह सकेंगे। जो राष्ट्र तटस्थ रहेंगे वा जो प्रदेश युद्धभूमि न बनेगा वहाँ भी भाँति भाँतिके कष्टों से युद्धक्षेत्र जैसी ही स्थिति उत्पन्न हो जाएगी। संसार के कई भागोंमें दुर्भिक्ष, बाढ़, जलप्लावन, अवर्षण, अग्निप्रलय, भूकम्पादि आधिदैविक आधिभौतिक उपद्रव भी महायुद्धके संहार कार्यमें सहायक सिद्ध होंगे। भारतमें भी अभी शान्ति स्थापित न होगी। भारतके कई भागोंमें (विशेषकर पूर्व दक्षिण प्रान्तोंमें) शीताधिक्य और अनुपयुक्त वर्षासे खेतीकी हानि हो कर दुर्भिक्ष जैसी स्थिति उत्पन्न होगी। वर्तमान समय में जो प्रत्येक वस्तुओंके भाव थोड़े बहुत गिरे (मन्दे) हुए हैं यह समर्घता या मन्दापन अधिक स्थिर नहीं रहेगा। फाल्गुनसे पुनः सब वस्तुओंका भाव ऊपर उठने लगेगा और सन् १९४४ के उत्तरार्धमें पुनः एक बार प्रत्येक वस्तुके भाव अत्यधिक ऊपर चढ़ जावेंगे, जिससे जनताकी कठिनाई बहुत बढ़ेगी। कण्ट्रोल और राशनिंग पद्धति पूर्णरूपेण सफल न हो सकेगी, इसके द्वारा जनताकी कठिनाइयाँ सर्वथा निवृत न हो सकेगी। गताङ्क (नववर्षाङ्क) के इसी स्तम्भमें हमने लिखा था कि— "कण्ट्रोल और राशनिङ्ग पद्धतिके कारण जनता तथा अधिकारियोंकी असुविधाएं बढ़ेंगी। कई प्रान्तोंमें अधिकारी स्वयं कण्ट्रोलकी असफलताका अनुभव कर इस बन्धनको ढीला करेंगे और कई प्रान्तोंमें दृढ़ होगा" इत्यादि। विज्ञ पाठकोंको विदित है कि अभी गत मासमें ही पञ्जाब तथा सिन्धके मन्त्रिमण्डल और केन्द्रीय सरकारमें इसी कण्ट्रोल समस्याको लेकर जो वैमनस्य उत्पन्न हुआ वह अभी दूर नहीं होने पाया है, अस्तु। पूर्व और दक्षिणकी ओरसे भारतको शत्रु आक्रमणका भी भय है। संक्षेप में अभी भारतको रोग युद्ध दुर्भिक्षादिसे अनेक प्रकार की शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक आपत्तियाँ सहन करनी होगी। अप्रैलसे आगेका समय हमें अधिक कष्टकर प्रतीत होता है। आगामी वर्ष सं० २००१ वि० का भविष्य हम 'वसन्ताङ्क' में लिखेंगे। यहाँ भारतके वर्तमान नये वायसराय महोदयके सम्बन्धमें भी ज्योतिर्विज्ञानके अनुसार शास्त्रीय विचार 'श्रीस्वाध्याय' के विज्ञ पाठकोंको बता देना आवश्यक समझते हैं।

ता० २१ अक्टूबर १९४३ ई० को प्रातःकाल नये समयके अनुसार १० बजकर १५ मिनट पर नये वायसराय श्री लार्ड वाईकाउण्ट वेवल महोदयने भारत की वायसरायल्टी पर पदग्रहणकी शपथ ली उस समय की लग्नकुण्डली यह है—

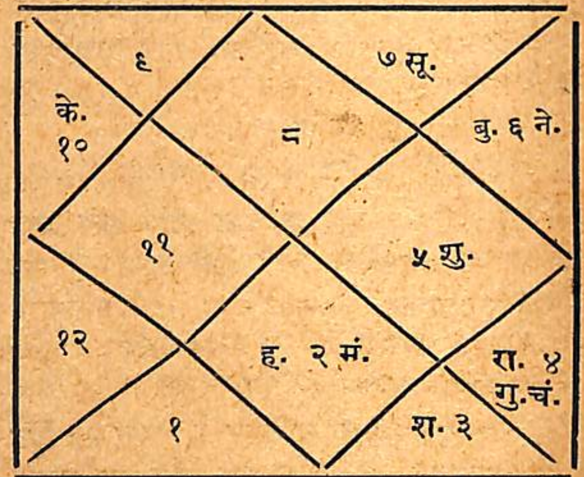

नये वायसराय महोदयकी जन्मकुण्डली हमें प्राप्त न हो सकी, अतः भारतके लिए इसी (अधिकारारूढ़ कुण्डली) को ही उनकी जन्मकुण्डली मान कर संक्षिप्त विचार पाठकोंके सम्मुख रक्खेंगे।

वृश्चिक लग्नका स्वामी सेनानायक महान् उग्र ग्रह मङ्गल सप्तममें बैठ कर लग्नको पूर्णरूपेण देख रहा है, यह सैनिक वायसराय लार्ड वेवल महोदयके शरीर एवं स्वभाव के सर्वथा अनुरूप ही है। जहाँ मङ्गल उन्हें महान् साहसी, शूरवीर, पराक्रमी, कुशल कूटनीतिज्ञ शासक बनाता है वहाँ पञ्चमेश गुरु गम्भीर, विवेकशील, आत्मविश्वासी, बुद्धिप्रधान, कर्मठ, चतुर राजनीतिज्ञ भी बताता है।

इस कुण्डलीमें राज्येश सूर्य नीचका हो कर व्ययमें पड़ा और व्ययेश शुक्र राज्यमें पड़ गया, यह योग नये वायसरायके शासनको यशस्वी एवं स्थाई बनानेमें महान् बाधक है। नवम स्थानमें गुरुचन्द्रका योग उत्तम है, अतः पहले पहले तो अपने अनुपम चातुर्यसे शक्तिभर प्रयत्न करके एक बार तो निराशाके वातावरणमें आशाका सञ्चार करनेका पूर्ण प्रयत्न करेंगे। परन्तु राहु योगके कारण इनका यह प्रयत्न सफलीभूत न हो सकेगा। चन्द्रमा भी राहुके साथ पड़ा है और यह राज्येश नीचराशिके सूर्यसे केन्द्रयोग कर रहा है अतः उपरि राजशक्तिकी संदिग्ध मनोवृत्तिके कारण श्री वेवल महोदयको अपनी मानसिक उच्च भावनाओं एवं सौजन्य स्वभावको बाध्य हो कर दबाना पड़ेगा, इसी प्रसंगमें कई बार उन्हें पारस्परिक सङ्घर्षका साम्मुख्य भी करना पड़ेगा।

यद्यपि मङ्गलके कारण वे अपने शासनमें पूर्ण प्रभुत्व एवं विशेषाधिकारोंका भी प्रयोग करेंगे, तथापि शासन-सूत्र-सञ्चालनमें सहयोगियोंकी कुटिल नीतिके कारण उन्हें बड़ी कठिनाइयोंका साम्मुख्य करना पड़ेगा। इससे वे स्वयं अपने सहज स्वभावको छोड़कर क्रूरता वा कुटिलनीतिको अपनावेंगे, जो आगे चलकर उनकी अप्रतिष्ठाका कारण बनेगी। माघ मास (जनवरी) के अनन्तरका समय श्री वेवल महोदयके लिए कई प्रकार की कठिनाइयोंका होगा। जुलाई तक वे अपने आपको सङ्घर्ष षड्यन्त्र एवं अनेक प्रकारकी आपत्तियोंमें घिरा पाएंगे। पाश्चात्त्य मतानुसार भारतकी राशि मकरका स्वामी शनि अष्टम गया है और लग्नेश मङ्गलसे इसकी मैत्री भी नहीं है, अतः आपके पूर्ण प्रयत्न एवं हार्दिक सहानुभूतिके होते हुए भी दुर्भाग्यवश भारत आपसे किसी प्रकारका विशेष लाभ प्राप्त न कर सकेगा। आपके शासनकालमें शनिमङ्गलके दूषित प्रभावसे भारतमें दमनचक्र, युद्ध, दुर्भिक्ष, रोगादि उपद्रवोंसे विनाशका अकाण्डताण्डव होनेकी सम्भावना है। भाग्येश चन्द्रमा गुरुके साथ है अतः आरम्भमें तो उनका भाग्य उन्नतिके शिखर पर पहुँचेगा, परन्तु अन्त में राहु योगके कारण अधिक समय तक गुरु उनका साथ देता दिखाई नहीं देता। परिस्थिति वशात् उनके मानसिक विचारोंमें बहुत उलटफेर होगा। भारतीय समस्याओंको सुलझानेमें उनकी मस्तिष्क शक्ति बहुत क्षीण होगी और भावुकतामें आकर वे कई ऐसे कार्य कर बैठेंगे जिससे अन्तमें उन्हें स्वयं पश्चात्ताप करना पड़ेगा। भारतीय ज्योतिष गणनानुसार भारतवर्ष की धनुःराशि है, इसका स्वामी गुरु उच्चराशिका हो कर स्वक्षेत्री चन्द्रमाके साथ भाग्य स्थानमें पड़ा है और लग्नेश मङ्गलसे गुरुकी मैत्री भी है, यह योग भारत तथा लार्ड वेवल दोनोंके लिए हितकर बना है। यही एक योग निराशान्धकारकी अर्धनिशामें आशाकी क्षीण रेखा प्रस्फुटित करता है। सम्भव है इसी योगके द्वारा नये वायसराय महोदय भारतका भविष्य उज्ज्वल बनानेमें सफल हो सकें। यद्यपि यहाँ भी गुरुके साथ राहु बाधक है, अतः हमें पूर्ण आशा नहीं है। तथापि भगवान्से हमारी प्रार्थना है कि नये वायसराय महोदयको ऐसी कल्याणकारक सद्बुद्धि प्राप्त हो जिससे वे अपने शासनमें पूर्ण सफल हो सकें और भारतके भावी इतिहासमें उनका शुभ नाम स्वर्णाक्षरोंमें लिखा जावे।

त्रैमासिक मुहूर्तादि विचार

[लेखक—श्री पं० जगन्नाथप्रसाद जी ज्यौतिषी (जगनजी)]

विवाह मुहूर्त्ताः

फाल्गुन कृष्णा ४ रविवार ता० १३ फरवरी हस्तभे रे० ६ ।।।।।।।।ऽ१८। अत्यावश्यके लग्न गोधूलि १० मिनट
फाल्गुन कृष्णा ८ गुरुवार ता० १७ फरवरी अनुराधा भे रे० ७ऽ शु० ।।।।ऽनृ० पं०।ऽ।। दिवालग्न १२ ल० ६
फाल्गुन कृष्णा १० शनौ ता० १६ फरवरी मूलभे रे० ७ ।ऽ।।ऽश० ऽचौ० ।।।। लग्नाऽन्यगोधूलिः ६
चैत्र कृष्णा १ शनिवार ता० ११ मार्च हस्तभे रे० ६ ।ऽ।।।।।।। ल० गोधूलिः

उपनयन मुहूर्त्ताः

फाल्गुन कृष्णा ५ सोमवार ता० १४ फरवरी
फाल्गुन शुक्ला २ शुक्रवार ता० २५ फरवरी
फाल्गुन शुक्ला ५ सोमवार ता० २८ फरवरी
चैत्र कृष्णा २ रविवार ता० १२ मार्च

द्विरागमन मुहूर्त्ताः

फाल्गुन कृष्णा ५ सोमवार ता० १४ फरवरी
फाल्गुन कृष्णा ८ गुरुवार ता० १७ फरवरी
फाल्गुन कृष्णा १२ सोमवार ता० २१ फरवरी
फाल्गुन शुक्ल ५ सोमवार ता० २८ फरवरी

प्रसूता स्नान मुहूर्त्ताः

माघ कृष्णा ७ सोमवार ता० १७ जनवरी प्र० सू० सम जलपूजा घ० १६।२६ यावत्
माघ कृष्णा ११ शुक्रवार ता० २१ जनवरी प्र० सू० सम जलपूजा
माघ कृष्ण १३ रविवार ता० २३ जनवरी जलपूजा
माघ शुक्ला ५ रविवार ता० ३० जनवरी प्रसूता स्नान जलपूजा
माघ शुक्ला १० गुरुवार ता० ३ फरवरी घ० २।२५ उप० प्रसूता स्नान
माघ शुक्ला ११ शुक्रवार ता० ४ फरवरी सम० प्रसूता-स्नान, जलपूजा
माघ शुक्ला १३ रविवार ता० ६ फरवरी जलपूजा
फाल्गुन कृष्णा २ शुक्रवार ता० ११ फरवरी प्रसूता स्नान सम
फाल्गुन कृष्णा ८ गुरुवार ता० १७ फरवरी जलपूजा
फाल्गुन कृष्णा ११ रविवार ता० २० फरवरी प्रसूता स्नान सम
फाल्गुन शुक्ला २ शुक्रवार ता० २५ फरवरी प्रसूता-स्नान सम
फाल्गुन शुक्ला ५ सोमवार ता० २८ फरवरी प्रसूता-स्नान सम
चैत्र कृष्णा २ रविवार ता० १२ मार्च प्रसूतास्नान
चैत्र कृष्णा ११ सोमवार ता० २० मार्च प्रसूता स्नान

गृहारम्भ मुहूर्त्ताः

माघ शुक्ला १० गुरुवार ता० ३ फरवरी ल० ८—१२
" ११ शुक्रवार ता० ४ " ल० १२

जीर्ण गृह प्रवेश मुहूर्त्ताः

माघ कृष्णा १० गुरुवार ता० २० जनवरी ल० ८
" ११ शुक्रवार ता० २१ " ल० १२
माघ शुक्ला १० गुरुवार ता० ३ फरवरी ल० ८
" ११ शुक्रवार ता० ४ " ल० १२
फाल्गुन कृ० ८ गुरुवार ता० १७ " ल० १२

सामान्य यात्रा मुहूर्त्ताः

पौष शुक्लपक्षमें

१२ शुक्रवार ता० ७ जनवरी पूर्व, दक्षिण
१३ शनिवार ता० ८ जनवरी दक्षिण, मध्याह्नोत्तर दक्षिण पश्चिम
१५ सोमवार ता० १० जनवरी दक्षिण पश्चिम

माघ कृष्णपक्षमें

१ मंगलवार ता० ११ जनवरी पश्चिम
२ बुधवार ता० १२ ,, ,,
६ रविवार ता० १६ ,, दक्षिण पूर्व
७ सोमवार ता० १७ ,, दक्षिण घ० १६।२६ उप०
११ शुक्रवार ता० २१ ,, उत्तर पश्चिम
१२ शनिवार ता० २२ ,, ,, ,,
१३ रविवार ता० २३ ,, पूर्व उत्तर

माघ शुक्लपक्षमें

२ गुरुवार ता० २७ जनवरी पश्चिम
३ शुक्रवार ता० २८ जनवरी दक्षिण
५ रविवार ता० ३० जनवरी उत्तर
१० गुरुवार ता० ३ फरवरी पूर्व
११ शुक्रवार ता० ४ ,, दक्षिण, पूर्व, घ० २४ यावत
१२ शनिवार ता० ५ ,, पश्चिम, दक्षिण, घ० ५ यावत्
१३ रविवार ता० ६ ,, दक्षिण, घ० ११ उप०

फाल्गुन कृष्णपक्षमें

२ शुक्रवार ता० ११ फरवरी पूर्व, उत्तर
११ रविवार ता० २० ,, उत्तर, पूर्व
१२ सोमवार ता० २१ ,, घ० ७ यावत् उत्तर, उपरान्त दक्षिण

फाल्गुन शुक्लपक्षमें

२ शुक्रवार ता० २५ फरवरी दक्षिण घ० २० उप० उत्तर
३ शनिवार ता० २६ ,, उत्तर पश्चिम
५ सोमवार ता० २८ ,, उत्तर

चैत्र कृष्णपक्षमें

१ शनिवार ता० ११ मार्च दक्षिण
२ रविवार ता० १२ मार्च पूर्व, दक्षिण
६ गुरुवार ता० १६ ,, उत्तर पश्चिम ६।११ यावत्
७ शुक्रवार ता० १७ ,, घ० ७ यावत्
११ सोमवार ता० २० ,, दक्षिण
१२ मंगलवार ता० २१ ,, पूर्व

चैत्र शुक्लपक्षमें

२ रविवार ता० २६ मार्च पूर्व, दक्षिण
५ बुधवार ता० २९ मार्च दक्षिण पूर्व

मकर संक्रान्ति

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी]

सं० २००० शकः १८६५ माघ कृष्ण ४ शुक्रवार ता० १४ जनवरी १९४४ ई० को सूर्योदयात्— इष्ट घट्यादि २२।१४ पर चतुर्थी तिथि, शुक्रवार, पू० फा० नक्षत्र, सौभाग्ययोग, बालवकरण और मिथुन लग्नमें सूर्य मकरराशिमें प्रविष्ट होंगे। यहींसे उत्तरायण और शिशिरऋतु (निरयनमानसे) तथा देवताओंका दिन और दैत्योंकी रात्रि आरम्भ होती है।

पुण्यकाल विचार

धर्मसिन्धुके "मकरे परे चत्वारिंशन्नाड्यः पुण्य-कालः" इस वचनसे २२।१४ उपरान्त (मध्याह्नोत्तर स्टे० टा० ५ बजेसे) सूर्यास्त पर्यन्त मकरसंक्रमणका मुख्य पुण्यकाल है। किसी आचार्यके मतसे मध्याह्नसे सूर्यास्त पर्यन्त भी इस संक्रान्ति का पुण्यकाल माना

जाएगा। मकरसंक्रान्ति और षट्तिला एकादशीको तिलमिश्रित जलसे स्नान, शरीरमें तिलोंका उद्वर्तन, तिलहवन, तिलमिश्रित जलपान, तिलभक्षण और तिलदान करनेका विशेष महात्म्य है—

तिलस्नायी तिलोद्वर्त्ती तिलहोमी तिलोदकी।
तिलभुक् तिलदाता च षट्तिला पापनाशिनी॥

इस संक्रान्तिके वाहनादि निम्नलिखित हैं—

१ व्याघ्रवाहन। २ उपवाहन अश्व। ३ मुहूर्त्ती ३०। ४ पीतवस्त्र। ५ गौरवर्ण। ६ चन्दनगन्ध। ७ जातिपुष्प ८ कुंकुमलेपन। ९ रजतपात्र। १० परमान्नभोजन ११ दधिपान। १२ समुद्रस्नान। १३ दक्षिणमें गमन १४ पूर्वमें मुख। १५ नैऋत्यकोणमें दृष्टि। १६ पाटल कंचुकी। १७ मुक्ताफल भूषण। १८ गदायुध। १९ सर्प-जाति। २० कुमारावस्था। २१ अग्निमण्डल। २२ इक्षु-रसलेपन। २३ भोगपन्था। २४ उपविष्टस्थिति। २५ गौरवर्ण। २६ वारनामसिश्रा। २७ नक्षत्रनाम घोरा २८ सिंहराशि।

संक्रान्तिका फल

मासपक्ष फल—चोर, पाखण्डी, क्रूरबुद्धि, और हिंसक लोगोंको सुख। सब प्रकारके श्वेतवस्त्र, रजतादि सर्व श्वेतधातुका भाव तेज। धान्यादिका भाव भी कुछ तेज।

तिथि वार फल—गेहूँ, ज्वार, बाजरा आदि धान्यकी वृद्धि, विवाहादि मङ्गल कार्य, भयनाश, सौख्यवृद्धि, सब प्रकारके अन्न और वस्त्र सस्ते। नमक, तिल, तैल तेज।

नक्षत्र-योग-करणफल—अनावृष्टि, दुर्भिक्ष-चिह्न, युद्धभय, जननाश, सर्वत्र क्लेश, दक्षिणदिशामें विशेष भय।

काल लग्न और मण्डलादिका फल—कृषकवर्गको कष्ट, शूद्रोंको पीड़ा, राजवर्गमें क्लेश, नित्य यात्रा करने वालोंको क्लेश, अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, चौराग्नि भय, राजाओंमें परस्पर विरोध, राजविग्रह, प्रजामें भय, सोना, चान्दी, वस्त्र, गेहूँ, मसूर और घृत गुड़ादि रस पदार्थ तेज।

मुख-गमन-दृष्टि-दिशा फल—दक्षिणमें उप-द्रव। सूर, मद, कलिङ्ग (जगन्नाथपुरीसे कृष्णातीर कटक पर्यन्त) बङ्गाल मगध (दक्षिण विहार) इन देशों के राजा प्रजाको कष्ट, ईशानसे भय, पूर्वदेशमें दुर्भिक्ष, सर्वत्र काल भय।

वाहनादि फल—राजाओंमें परस्पर वैर, युद्ध, विग्रह, क्षत्रिय तथा कृषकवर्गको सन्ताप, चतुष्पद प्राणि अश्वादिकोंको पीड़ा, हिंसक एवं बालवर्ग सुखी। व्यापार वृद्धि।

वस्त्र कञ्चुकी लेपनादि फल—गर्भिणी स्त्रियों को कष्ट, पीले रङ्गकी वस्तुओंका (विशेषकर हल्दीका) भाव तेज हो।

पात्र भक्ष्य आयुधादि फल—चान्दी बहुत तेज हो, मोती और घृतादि रसपदार्थ मंहगे, धान्यवृद्धि, राजवर्गमें कष्ट, प्रजामें चिन्ता, दक्षिणमें भय, कलिङ्ग बङ्गदेशमें उपद्रव, नेत्ररोग, अतिसारादि रोगोपद्रव, ब्राह्मणोंको पीड़ा, वर्षा मध्यम, धान्यादिका भाव सम।

इस संक्रान्ति कालीन लग्नकी ग्रह स्थिति भी संसारके शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य एवं सामाजिक, राज-नैतिक, आर्थिक परिस्थितिके लिए श्रेयस्कर नहीं है।

त्रैमासिक पर्व व्रतादि निर्णय

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी]

पौष शुक्ल	११	गुरुवार	ता०	६	जनवरी	पुत्रदा एकादशी व्रत
	१२	शुक्रवार	ता०	७	,,	प्रदोषव्रत, ताजिया
	१४	रविवार	ता०	६	,,	सत्यव्रत
	१५	सोमवार	ता०	१०	,,	माघस्नानारम्भ
माघ कृष्ण	३	गुरुवार	ता०	१३	,,	लोहड़ी, श्रीगणेश जयन्ती, सङ्कष्टचतुर्थी तिल ४ व्रत चन्द्रोदय प्र० स्टैण्डर्ड टाईम घं० ६ मि० ५० रात्रिमें
	४	शुक्रवार	ता०	१४	,,	मकरसंक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल मध्याह्नोत्तर
	११	शुक्रवार	ता०	२१	,,	षट्तिला एकादशी व्रत
	१३	रविवार	ता०	२३	,,	प्रदोष व्रत
	३०	मंगलवार	ता०	२५	,,	मौनी अमावस
माघ शुक्ल	२	गुरुवार	ता०	२७	,,	चन्द्रदर्शन
	५	रविवार	ता०	३०	,,	वसन्तपञ्चमी श्री ५
	६	सोमवार	ता०	३१	,,	अचला सप्तमी, रथ ७
	८	मंगलवार	ता०	१	फरवरी	भीष्माष्टमी
	११	शुक्रवार	ता०	४	,,	जया एकादशी व्रत
	१२	शनिवार	ता०	५	,,	भीष्मद्वादशी
	१३	रविवार	ता०	६	,,	प्रदोष व्रत
	१४	मंगलवार	ता०	८	,,	सत्य व्रत
	१५	बुधवार	ता०	६	,,	माघस्नान समाप्ति, माघी १५
फाल्गुन कृष्ण	३	शनिवार	ता०	१२	,,	कुम्भसंक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल दूसरे दिन, गणेश ४ व्रत
	८	गुरुवार	ता०	१७	,,	श्रीसीता जन्माष्टमी
	११	रविवार	ता०	२०	,,	विजया एकादशी व्रत
	१२	सोमवार	ता०	२१	,,	सोमप्रदोष व्रत
	१३	मंगलवार	ता०	२२	,,	श्रीमहाशिवरात्रि १४ व्रत
	१४	बुधवार	ता०	२३	,,	पितृकार्येऽमावास्या
	३०	गुरुवार	ता०	२४	,,	देवकार्येऽमावास्या
फाल्गुन शुक्ल	२	शुक्रवार	ता०	२५	,,	चन्द्रदर्शन
	८	गुरुवार	ता०	२	मार्च	होलाष्टकारम्भ
	११	रविवार	ता०	५	,,	आमला एकादशी व्रत
	१३	मंगलवार	ता०	७	,,	भौमप्रदोष व्रत
	१५	गुरुवार	ता०	६	,,	सत्यव्रत, होलिकादाह, हुताशनीजन्म

चैत्र कृष्ण	१	शुक्रवार	ता० १०	,,	वसन्तोत्सव, होलिकाभस्मधारण, आम्रपुष्पप्राशन, श्वपचस्पर्श, धुलैंडी
	३	सोमवार	ता० १३	,,	मीन संक्रान्ति मु० १५ पुण्यकाल मध्याह्नोपरान्त, गणेश४
	७	शुक्रवार	ता० १७	,,	श्रीशीतला सप्तमी शीतलापूजन
	८	शनिवार	ता० १८	,,	शीतलाष्टमी
	११	सोमवार	ता० २०	,,	पापमोचनी एकादशी व्रत
	१३	बुधवार	ता० २२	,,	प्रदोष व्रत, वारुणी पर्व
	१४	गुरुवार	ता० २३	,,	चैत्रचतुर्दशी
	३०	शुक्रवार	ता० २४	,,	चैत्री अमावस
चैत्र शुक्ल	१	शनिवार	ता० २५	,,	चान्द्र संव्वत्सर शक १८६६ (सं० २००१) आरम्भ, नवरात्रारम्भ, तैलाभ्यङ्ग, घटस्थापन, चन्द्रदर्शन, श्री- [महर्षि गौतम जयन्ती
	२	रविवार	ता० २६	,,	मत्स्य जयन्ती
	३	सोमवार	ता० २७	,,	गणगौरी पूजन
	८	शनिवार	ता० १	अप्रैल	दुर्गाष्टमी, श्रीराम ६ व्रत स्मार्त्तोंका
	६	रविवार	ता० २	,,	श्रीरामनवमी व्रत वैष्णवोंका

महापुरुषोंकी जयन्तियाँ निर्वाणदिन और प्रसिद्ध मेले

माघ कृष्ण	७	सोमवार	ता० १७	जनवरी	श्रीरामानन्द जयन्ती
माघ कृष्ण	३०	मंगलवार	ता० २५	जनवरी	मौनी अमावस मेला प्रयागराज
माघ शुक्ल	१४	मंगलवार	ता० ८	फरवरी	स्व० श्रीगोखले पुण्यदिन
फाल्गुन कृष्ण	६	शुक्रवार	ता० १८	फरवरी	समर्थ श्रीरामदास पुण्यदिन
फाल्गुन शुक्ल	२	शुक्रवार	ता० २५	फरवरी	श्रीपरमहंस रामकृष्ण जयन्ती
फाल्गुन शुक्ल	१५	गुरुवार	ता० ६	मार्च	महाप्रभु श्रीकृष्ण चैतन्य जयन्ती
चैत्र कृष्ण	१	शुक्रवार	ता० १०	मार्च	मेला आनन्दपुर साहब (पंजाब)
,, ,,	२	रविवार	ता० १२	,,	भक्त श्री तुकाराम पुण्यदिन
,, ,,	६	गुरुवार	ता० १६	,,	श्रीएकनाथ महाराज पुण्यदिन
,, ,,	११	सोमवार	ता० २०	,,	शुद्धाद्वैताचार्य श्रीवल्लभजयन्ती
,, ,,	१४	गुरुवार	ता० २३	,,	मेला पृथूदक पिहोवा (कुरुक्षेत्र)
चैत्र शुक्ल	८	शनिवार	ता० १	अप्रैल	मेला श्रीमनसादेवी मनीमाजरा

छुट्टियाँ हाईकोर्ट पंजाब और युक्तप्रांत

मुहर्रम (ताजिया) ता० ५ से ७ जनवरी बुधसे शुक्र तक
लोहड़ी— ता० १३ जनवरी गुरुवार
मकरसंक्रान्ति— ता० १४ जनवरी शुक्रवार
मौनी अमावस— ता० २५ जनवरी मंगलवार
वसन्तपञ्चमी— ता० ३० जनवरी रविवार
उर्स दातागंजबख्श— ता० १५ फरवरी मंगलवार
शिवरात्रि— ता० २२ फरवरी मंगलवार
आखिरी चहारशम्बा— ता० २३ फरवरी बुधवार
ईद उल्लमिलादउल्नवी — ता० ८ मार्च बुधवार
होली— ता० ६ मार्च गुरुवार
होला— ता० १० मार्च शुक्रवार
आठोंका मेला— ता० १७-१८ मार्च शुक्र शनिवार
दुर्गा-अष्टमी— ता० १ अप्रैल शनिवार
रामनवमी— ता० २ अप्रैल रविवार

त्रैमासिक व्यापार-चन्द्रिका

[लेखक-गणकभास्कर दैवज्ञमणि ज्योतिर्विद्यारत्न श्री पं० गङ्गाप्रसादजी ज्यौतिषाचार्य]

वैदिक ज्योतिः शास्त्रमें गणित और फलित यह दो विभाग महर्षियोंने निर्धारित किये हैं। फलित ज्योतिषमें ग्रहोंकी राशि, क्षेत्र, मित्र-शत्रु, स्वामी, वर्ग आदि अवस्थाओंको जानकर निर्णीत-संज्ञाओंके अनुसार ग्रहोंको शुभ अथवा अशुभ जानकर सार्वजनिक तथा सामूहिक श्रेष्ठ, नेष्ट, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष, समर्घ, महर्घ, आदिका निर्णय प्राचीन महर्षियोंने परोक्ष निरयन गणित पर ही निर्माण किया है। और फलादेशकी जो संहिताएं बनाई हैं उनका चमत्कार प्रत्यक्ष प्रमाणित है।

सिद्धान्त गणित फलादेशका मुख्य आधार है। यथार्थ भविष्यफल सर्वथा गणित पर ही निर्भर है। जैसा कि एक संहिताकारने लिखा है कि उत्तर दिशाकी ओर जाते हुए सौम्यग्रह सदा अच्छा फल देते हैं और दक्षिण दिशाकी ओर जाते हुए पापग्रह सदा पापफलको देते हैं। अथवा ऐसा समझिये कि क्रान्ति-वृत्तमें पापग्रह पृथ्वीके समीप आते हैं तब पापफलको देते हैं और सौम्यग्रह जब दूर जाते हैं तब शुभ फलको देते हैं। इसी परिभ्रमण चक्रसे बुद्धिके तारतम्यतानुसार व्यापार-भविष्यका भी निर्णय किया जाता है।

"श्रुतिःपष्टिश्चाखिला अविचाचलाय" यह अथर्ववेदकी ऋचा निरयन प्रणालीका आगमसे ही अर्थ बोधक बन रही है। इसलिये वेदोंके देश भारतवर्षके सभी सिद्धान्त निरयन गणितको ही फलदायक मानते हैं और वास्तवमें ऐसा ही है। भारतीय निरयन गणित दीपक है और फलित उसकी प्रभा है। यह मानी हुई बात है कि जन्मपत्र वर्षफल गोचर प्रश्न आदिका फलित संहिताकारोंके समयमें बराबर मिलता था, उनका उद्देश्य तीन बातों पर ही था (१) इष्टशोधन (२) दृग्गणितानुसार ग्रहयोग (३) सप्त ग्रहों पञ्च उपग्रहोंके बलानुसार फलितका निर्णय करनेसे उनका निर्माण किया हुआ भविष्य बराबर मिलता था, और आगे भी अन्त तक बराबर मिलता ही रहेगा। किन्तु वर्तमान समयमें भारतीय ज्योतिषके विकासमें शिथिलता आ चुकी है। इसका एक कारण यह भी है कि कितने ही विद्वान् फल ज्योतिष सायनमानसे कहते हैं और कितने ही विद्वान् मकरंद ग्रहलाघवादि स्थूल करणोंके गणित द्वारा कहते हैं। इन्हीं अनेक मतोंके कारण ज्योतिष-फलितका प्रकाश मन्द होता चला जा रहा है। इसलिये हम अपने भारतीय ज्योतिर्विदोंसे नम्र निवेदन कर देना उचित समझते हैं कि प्राचीन कालमें महर्षियोंने सायनमानको केवल दृक्तुल्य गणितकी शुद्धिके लिए ही उपयोगी माना है। जैसे ग्रहोंके उदय-अस्त वक्रमार्ग ग्रहणादि यथासमय अयनकी शुद्धि होती रहे। इसी कारण सायन गणित द्वारा दृकर्म साधनके लिए सायनमान सिद्धान्तोंमें लिखा है। फलित विकासके लिए सायनमानको स्थान नहीं दिया। जितने फलित ग्रन्थ वर्तमानमें उपलब्ध हैं उनका आशय निरयन गणितको ही सारभूत बतलाता है। भारतकी प्राचीन सम्पत्ति निरयन-पद्धतिको छोड़ कर पाश्चात्योंका अनुकरण करनेके लिए फलित ज्योतिषको सायन पद्धतिके योगायोगोंकी ओर न खेचें। सायन-पद्धतिसे भविष्यफल मिलानमें शत-प्रतिशत सफलताएं किसने प्राप्त की हैं? जैसे कि निरयन फलितमें वराहमिहिर, भास्कराचार्य, गणेश दैवज्ञ आदि प्राप्त कर चुके हैं। इसलिये भारतीय ज्योतिर्विदोंको निरयन पद्धतिमें ही परिश्रम करना उचित है।

निरयन पद्धतिके फलित निर्णयमें शुद्ध गणितकी प्राधान्यता प्राचीन समयसे चली आ रही है।

इसलिए मकरंदको ४६५, ग्रहलाघवको ४२३ वर्ष होनेसे कालान्तरकी चालसे अयन-ग्रहण बराबर नहीं मिलते, इसलिये फलितके कार्यके उपयोगी नहीं है। वर्ष जन्म-पत्र इत्यादि कार्य केतकी पंचाङ्गसे करने चाहिये। क्योंकि वर्तमान समयमें केतकी ग्रह-गणितके निरयन ग्रह दृक्तुल्य होते हैं। इसलिये जो योग आकाशमें ग्रहोंके बनेंगे, उनका फल भी यथार्थ मिलेगा। वैदिक ज्योतिः शास्त्रमें फलित प्रबोधक ग्रहयोगोंको प्राचीनकालसे महर्षियोंने माना है।

अपूर्वेणेषिता वाचस्ता वदन्ति यथायथम्।
वदन्ति यत्र गच्छन्ति तदाहुर्ब्राह्मणं महत्॥

अथर्व-वेदके स्वाध्यायमें ऊपरकी ऋचासे यह बताया गया है कि आदि पुरुषके द्वारा प्रेरित हो कर यथायोग्य वर्णन करते हुए निसर्गवाक्य जिसमें समा जाते हैं वही श्रेष्ठ ब्रह्म है। अर्थात् गणित ज्योतिषसे जाने हुए नैसर्गिक ग्रहयोग उस आदि पुरुषके वाक्य होते हैं। फलित ज्योतिषसे उनका वर्णन ज्ञात हो कर वे वाक्य उसी श्रेष्ठ ब्रह्ममें तल्लीन हो जाते हैं। यहां यह विषय इस उद्देश्यसे आया है कि ग्रहयोग बनते हैं, फलते हैं, और मिट जाते हैं। यानि बनते हैं इसका अर्थ (भविष्य बोधक) फलते हैं (वर्तमान प्रदर्शक) मिट जाते हैं (भूत-काल सूचक) इस प्रकार भविष्यकाल, वर्तमानकाल, और भूतकालमय त्रिकाल-मूर्ति वेद तथा वैदिक ज्योतिषी त्रिकालदर्शी कहलाते थे।

शास्त्रीय आधारिक प्राकृतिक समर्घ-महर्घ मूलाङ्कः

एकराशौ गताह्येते सौम्यशुक्रदिनाधिपाः।
सर्वधान्यमहर्घत्वं मेघाः स्वल्पजलप्रदाः॥१॥
शुक्लपक्षे द्वितीयायां भानोर्वामोदयः शशी।
तस्मिन्मासे समर्घं स्यान्महर्घं दक्षिणोदये॥२॥
विग्रहं हि समे चन्द्रे दुर्भिक्षं दक्षिणोन्नते।
व्याधिचौरभयं मूले सुभिक्षं चोत्तरोन्नते॥३॥

फलित ज्योतिष विकासके आदि मूल वराह-मिहिर आचार्यने बृहद्रत्न-मंजूषाके अर्घप्रकरणमें समर्घ-महर्घ फलितके निर्णयके उक्त श्लोकोंकी सैद्धान्तिक मतसे रचना की है। वह प्राचीनकालमें भी शतप्रतिशत फलित सूचक थे, और आज भी प्रत्यक्ष प्रमाणित है। इसका सारांश इस प्रकार है:—

(१) सूर्य बुध शुक्र तीनों ग्रह जब किसी एक राशि पर रहते हैं तो वर्षा कम होती है और अनाजके भाव तेज होते हैं।

(२) शुक्ल पक्षकी द्वितीयाको चन्द्रमा यदि सूर्यसे उत्तर दिशामें चले तो वस्तुओंकी मन्दी होती है। अन्यथा तेजी होती है।

(३) चन्द्रमाकी दक्षिण श्रृङ्गोन्नति सर्वथा दुर्भिक्ष सूचक, समानता विग्रहवर्द्धक, मूलोन्नति अरिष्टवर्द्धक और वामोन्नति सर्वदा सुभिक्ष सम्बोधक होती है।

त्रैमासिक व्यापार-फल-प्रदर्शक ग्रहयोग

तारीख	वार	ग्रह-योग	व्यापारिक फल
५ जनवरी	बु.	(चं. ६ सू.)	सामूहिक व्यापार सर्व वस्तुकी नरमाईसे नफरत करेगा।
७		शु. (चं. ७ शु.)	चांदी, रुई, सूत, अचानक चमककर चकमा देना चाहती है।
१०		सो. (चं. १२ मं.)	सामूहिक तेजी खरीददारोंको मुलायमी दिखला रही है।
१४		शु. (चं. १० मं.)	सोना और चांदीकी तेजीसे एक बार नफा करना।
१५		श. (चं. ५ बु.)	रुईके भाव सूतके खरीददारोंको खरीदका मौका देते हैं।
२२		श. (चं. ७ श.)	मजबूत ऊछाला आवे तो रुई चांदी वेचना ठीक है।
२५		मं. (चं. १ बु.)	सूत रुई और मूँगके भाव मंदीकी तरफ जाना चाहते हैं।
२८		शु. (चं. ११ बु.)	नरमाई आवे तो सूत, चांदी, रुई, खरीदनेका चांस है।
३१		सो. (चं. ५ गु.)	सोना, गेहूँ, चनामें मुनाफा मिल रहा है तो बेचाण करो।

तारीख	वार	ग्रहयोग	व्यापारिक फल
२ फरवरी	बु.	(चं. ६ बु.)	मूँग बाजरा अरहरके व्यापारमें खरीद करना चाहिये।
३	गु.	(चं. ८ शु.)	चांदीके भाव खास चमकीली चमक दिखाएंगे।
४	शु.	(चं. ८ बु.)	अधिक ऊंचे भावोंमें बाजरेसे मिलते मुनाफे पर विचार करो।
५	श.	(चं. २ रा.)	उड़द मूँग और काली मिर्च इन भावोंसे नरम रहेगी।
६	र.	(चं. १२ मं.)	लाल मिर्च और लाल रङ्गकी तेजीका टिकना मुश्किल है।
७	सो.	(चं. ७ बु.)	रुईके नरम भावोंमें तेजीका उछाला आवेगा।
८	मं.	(चं. १ रा.)	काली मिर्च सबसे पहले तरक्कीकी मुन्तजिर होगी।
१०	गु.	(चं. ६ बु.)	ज्वार और बाजरेकी मजबूती मूंग और मटरके साथ लेगी।
१२	श.	(चं. ५ सू.)	सफेद वस्तुमें खास तेजी आरम्भ होगी।
१४	सो.	(चं. ४ शु.)	रंगीन कपड़ा तेजीकी टाप सट कराने लगेगा।
१६	बु.	(चं. ८ मं.)	सोना चांदी गल्ला तेजीके पैगाम सुना रहे हैं।
१८	शु.	(चं. ३ शु)	तिलहन चांदी सोना मंदीकी इत्तला दे रहे हैं।
१६	श.	(चं. ६ गु.)	कपूर सुपारी और नारियन नया रंग तेजीका बदलेंगे।
२१	सो.	(चं. १ शु.)	चांदी और घृतकी तेजी मूँगफलीको साथ लेगी।
२३	मं.	(चं. १ बु.)	रुई चांदी और मूँगफली मंदीमें जाना चाहती है।
२४	मं.	(चं. ६ रा.)	तेल और काली मिरच मंदीकी तरफ जावेंगे।
२६	बु.	(चं. ६ गु.)	चांदी सोना काली मिरच मूल तेजीकी सूचना देते हैं।
२८	सो.	(चं. ११ सू.)	मूंगफली और चांदीकी ऊंचाईसे नफेका विचार करो।
२६	मं.	(चं. ४ गु.)	चावलकी आमद बढ़नेकी उम्मीद बढ़ने लगेगी।
१ मार्च	बु.	(चं. ३ रा.)	राई कोलसा काली मिर्चके भाव कुछ कड़क होना चाहते हैं।
३	शु.	(चं. ६ शु.)	चांदी और रुई खरीदनेका चांस है।
४	शु.	(चं. १२ श.)	हाजिरकी तेजी वायदोंकी तरफदारी करने लगेगी।
७	मं.	(चं. ८ सू.)	आजके ऊंचे भावोंमें मिलता हुआ मुनाफा बचा लेना।
८	बु.	(चं. १२ रा.)	अलसी और सरसों नफा दिखाना चाहती है।
१२	र.	(चं. ६ सू.)	अनाजके भाव आजसे ही मंदीका अन्दाजा बतलाएंगे।
१३	चं.	(चं. ५ शु.)	रुई चांदी और सोना तेजीकी तरफ जाना चाहते हैं।
१७	शु.	(चं. ६ गु.)	चना गेहूँ काली मिरच मंदीमें उतरना चाहती है।
२३	गु.	(चं. ६ गु.)	चावल खांड और गुड़के भावमें मंदीका प्रवेश होगा।
२५	श.	(चं. १ बु.)	विक्रमार्क राज्यात् सं० २००१ का शुभ आरम्भ होता है।
२७	सो.	(चं. १२ बु.)	चांदी सोना रुईकी तेजी उछलकर बढ़ना चाहती है।
२६	बु.	(चं. १० शु.)	चांदी और रुईके साथ सूत और अरंडा भी तेज होगा।
१ अप्रैल	श.	(चं. २ गु.)	काली मिर्च राई तेल सोनेके साथ आगे बढ़ेंगे।
३	सो.	(चं. ६ सू.)	तेजीका पीरीयड मंदीका योग दिखला जायगा।

त्रैमासिक व्यापारका सारांश

सं० २००० पौष शु० १० से चैत्र शु० १० तक ग्रहोंके राश्यन्तर वक्रमार्ग उदयास्त योगों द्वारा व्यापारका सारांश इस प्रकार है—

चांदी सोना धातु सब मास जनवरी मांय ।
पहिलो भाग मन्दो रहे दूजो तेजी जाय ॥१॥
रहे फरवरी तेज सब रस कस घृत गुड़ तैल ।
धातु धान्य फल मूल, खर महिष गाय अरु बैल ॥२॥
मार्च महीनो जोरको लड़ें राजवी लोग ।
प्रथम भाग तेजी तणो पीछे योग सुयोग ॥३॥

(१) पौष शुदी १० से माघ शुदी ६ तकका सारांश—इस मासमें पांच मंगल तथा ५ बुधवार हैं। सो पहिले १५ दिनमें पृथ्वी पर रक्त सम्बन्धी रोग हों, राजाओंमें युद्धकी परिस्थिति तीव्रगतिसे बढ़े। चांदी, सोना, रूई, मूंग, चावल, गुड़, कपास, सरसों, अलसी, घृत, अरहर, लोहा, धातु इत्यादि तेज होवे।

पौष शुदी १० से १५ तक—चांदीमें ७) सोने में ४) रुईमें ३) कालीमिरच ४) सूतमें १) की मन्दी आवे। सकरमें २) गुड़में १) अरहरमें १॥) घृतमें ६) की तेजी रहेगी। मन्दी वाली वस्तु खरीदना और तेजी वाली बेचना चाहिए।

माघ वदी १ से ३० अमावस तक—चांदी १०) सोना ८) रूई ३) सूत ।॥) काली मिरच ८) की तेजी आवे। गुड़ सकर अलसी सम, तिल्ली तेल मूँगफलीमें थोड़ी मन्दी आ कर तेजीका उछाला आवेगा।

माघ सुदी १ से १५ तक— सुदी २ गुरुवारका चन्द्रदर्शन मु. १५ है, इस योगके कारण चांदीमें १५) सोनेमें १०) रुई पंजाब गांठोंमें ५) जरीलामें ५०) सूत कपास कपड़ामें जोरदार तेजी आवेगी। अलसी सरसों तिलहनमें रु० १) की मन्दी आ कर रु० ३) की तेजी आवेगी। इस मासका व्यापार अच्छे मुनाफेका देने वाला है।

फाल्गुनवदी १ से ३० अमावस तक—इस मास में ५ गुरुवार हैं। धान्य मन्दा, तिलहन तेज होगी। चांदी ७) मन्दी जा कर ५) तेज, सोना ३) मन्दा जा कर ६) तेज, रुईमें १०) सूतमें १) अलसी २) सरसों २॥) तिल्लीमें ४) तक तेजी होनेके योग हैं।

फाल्गुन शुदी १ से १५ तक—

चन्द्रदर्शन मु० ४५ है इसका असर चांदी में १०) से १५) तक, सोनेमें ७) रुई देशी गांठ ४) जरीलामें २५) मन्दी आवेगी। घृत गुड़ सकर चावल काली मिरच तेज होंगे। गेहूँ चना अरहर ज्वार क्रम से २) रु० मन मन्दीकी तरफ जावेंगे।

चैत्रवदी १ से ३० अमावस्या तक—इस पक्षमें युद्धकी चैतन्यता हो, प्रजामें रोग हो, व्यापार इकतरफा लाईन पर जावेगा। चांदीमें २०) सोनेमें १२) रुईमें १००) सूतमें ५) सिर्फ ४ दिनके अन्दर शीघ्र गतिसे तेजी आवेगी। इस चान्सको व्यापारी गौर करके हासिल करें।

चैत्रशुदी १ से १० तक—इस पक्षमें तीन शनिवार, याम्य-श्रृङ्गोन्नति मु० ३० होनेसे व्यापार रोजाना नवीन रूप धारण करेगा। चांदीमें क्रमसे ५) ६) रोजाना घटा बढ़ी होगी। चांदीमें १०) सोनेमें ७) रुईमें ३०) कालीमिरचमें ६०) बारदाना १०) रङ्ग सुर्ख डोल ५) रत्तल की जोरदार घटाबढ़ी होगी। सेशल चांस मंगवाना चाहिए।

[नोट]—व्यापारिक योग और मास पक्षफल दोनोंको मिलाकर व्यापार करें। इसमें अङ्क संख्या रुपयोंकी दी गई है। चांदी १००) भर पर, सोना १ तोले पर, रुई गांठ और खंडी पर, कालीमिरच १४ खंडी पर, सूत १ पुड़ा पर और गल्लेका १) मन पर तेजी मन्दी समझना।

व्यापारिक तेजी मन्दी और ज्योतिष

[लेखक—श्री प्रो० बी० सी० महता म्युनिस्पल कमिश्नर]

इसके पूर्व कि अपने लेखको प्रारम्भ करूं, मैं उन सज्जनोंके प्रति आभार प्रदर्शन किए बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने मुझे अपने पत्रों द्वारा मेरे गत लेखकी प्रशंसा कर मुझे प्रोत्साहन दिया है। मैं भी उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि भविष्यमें मैं जहाँ तक हो सकेगा निरन्तर अपने लेख इस पत्र में भेज कर आप लोगोंकी सेवा करता रहूँगा।

गत तीन मासमें ग्रहोंने जो रंग दिखाये वो आपके समक्ष हैं। मुझे भी इस बातकी प्रसन्नता है कि मेरे गत लेखके अनुसार अक्टूबर मासमें ही रुई चांदी आदि सट्टेके व्यौपारसे कंट्रोल हटा दिया गया। अब सन् १९४४ का प्रवेश है। सन् १९४४ नम्बरोलोजीके अनुसार अत्यन्त महत्त्वका वर्ष है, क्योंकि इसकी जोड़ नं० ९ नव आता है, जो नम्बरोलोजीका अन्तिम नम्बर है। संख्या एक नं० से आरम्भ और ९ पर समाप्त होती है, इससे आप स्वयं अनुमान लगा सकते हैं कि इस नम्बरके अनन्तर पुन: नं० १ आरम्भ होगा। नं० १ अत्यन्त शान्तिका देने वाला नम्बर है और नं० ९ ठीक उससे विपरीत। अत: इस वर्षको एक अत्यन्त महत्त्वशाली वा घटनापूर्ण वर्ष समझा जा सकता है। तथा इसका प्रभाव व्यापारिक जगत् पर भी बहुत अधिक दिखाई देगा और ऐसी अनहोनी घटाबढ़ी होगी कि जिससे आश्चर्यचकित होना पड़ेगा।

जनवरीके प्रथम सप्ताहमें ता० ३ को बुध धनुराशि में अस्त होता है जो रुईमें मन्दीका द्योतक है। सूत, चांदी, सोना भी कुछ नर्म रहेगा। यह मन्दी तेजीके खिलाड़ियोंके लिये अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होगी, क्योंकि ता० ११ को मंगल नेपच्यूनका ट्राईन योग वा मंगलका मार्गी होना व्यापारिक चीजोंमें तेजीका अच्छा प्रभाव उत्पन्न करेंगे और बाजार ट्रन्ड तेजीकी ओर रहेगा तथा मन्दीके रिएक्शनके साथ बाजार बढ़ेगा।

ता० २० जनवरीको एक योग मन्दीका बना है जो अवश्य मन्दी लावेगा, किन्तु यह मन्दी टिकाऊ नहीं रहेगी। तथा ता० २३ से फिर एक सप्ताह तक जनरल तेजी ही रहेगी।

फरवरीके प्रथम सप्ताहमें एक ऐसा योग दिखाई देता है कि जिसको देख यह शंका होती है कि कहीं फिर सट्टेके व्यापार पर कण्ट्रोल आ कर सट्टा बिल्कुल ही बन्द न हो जावे। यदि कण्ट्रोल नहीं हुआ तो पहले सप्ताहमें व्यापारमें अच्छी घटबढ़ होगी। पहले बाजार बढ़ेगा फिर घटेगा।

ता० २० फरवरी तक बाजारमें पर्याप्त तेजी आजावेगी, अनन्तर फिर बाजार घटेगा। ता० २६ को रुई, चांदी, सोना, सूत इत्यादिमें मन्दी प्रारम्भ होगी जो फरवरीके अन्त तक बराबर रहेगी।

मार्च १ से फिर तेजीके योग बन रहे हैं, जो ५ तक तेजी करेंगे, अनन्तर ता० ६ को बुध केन्द्र हर्शल तथा ता० ७ को शनि मंगल युति होगी जिसके कारण व्यापारिक जगत्में एक विचित्र प्रकारकी उलझन उत्पन्न होगी, तथा रुई, सूत, कपड़ा, सोना, चांदी आदि वस्तुओंके भाव गिरनेकी सम्भावना है। इस मन्दीसे विशेष सावधान रहना चाहिये क्योंकि इसमें अनायास मन्दी आते आते भारी तेजी भी आ जावेगी। श्रमजीवी तथा मध्यमश्रेणीके लिये यह समय अनिष्ट्कर है। हड़ताल वा धार्मिक रौलों आदि की पूर्ण सम्भावना है।

ता० ११ को फिर थोड़ा बाजार तेजीकी ओर बढ़ेगा परन्तु १३ को मन्दी भी अचानक आवेगी, जो बराबर एक सप्ताह तक चलेगी। ता० २२ को बुध सेक्स्टाइल हरशल यह तेजीका चमकारा लावेगा। ता० २४ को थोड़ी मन्दी आकर ता० २६, २७, २८ को बुध ट्राईन बृहस्पति तथा बुध सेक्स्टाइल शनिसे व्यापारिक वस्तुओंमें अच्छी तेजी दिखाई देगी। विशेषकर रुई, सूत इत्यादिमें तेजी दृष्टिगोचर होगी सो ज्ञात रहे। विशेष फिर कभी।

त्रैमासिक व्यापार विमर्श (तेजी मन्दी)

[लेखक—श्री पं० बिहारीलालजी दैवज्ञ]

सौर माघ मासका ब्यौरा

(ता० १४ जनवरीसे ११ फरवरी तक)

इस मासके ग्रहयोगोंका सम्यक्तया विचार करने से ज्ञात होता है कि अधिकतम रफ्तार मन्दीकी चलते चलते बीच-बीचमें कभी-कभी तेजीके उछाले से आएंगे। रुई ४०) ५०) सोना विनौला ३) ४) अलसी गेहूँ १।।) २) चांदी एरण्डा मूंगफली ५) ७) की घटबढ़ लेते परिणाम मंदीका पाया जाता है। सौदा करनेके पहले हर तरकीबसे मोरचाबन्दी करके व्यापार करना।

ता० १४ जनवरीसे २० जनवरी तक एक सप्ताहमें—

रुई १५) २०) सोना विनौला १) १।) चान्दी एरण्डा मूंगफली २।।) ३) अलसी गेहूँ ।) ।=) की तादादमें घटना प्रतीत होता है। मार्केटमें पहले ही माल बेच दें या मंदी लगाके व्यापार करें।

ता० २१ से २६ जनवरी तक दूसरे सप्ताहमें—

जब कि समय मंदीका सूचक है तब रोजगार भी सस्ताईकी तैयारीका करें। किसी वस्तुके समयोचित सम्बन्धका निर्णय कर व्यापार करें। माथेका सौदा करना ठीक है।

ता० २७ जनवरीसे २ फरवरी तक तीसरे सप्ताहमें—

ता० ३० जनवरी तक बाजार मन्दा, ३१ जनवरीसे ऊपर उठने लगे। रुईमें १०) १५) चांदी मूँगफलीमें २) २।।), सोना विनौलामें ।=) ।।।), गेहूँ अलसीमें ।-) ।≡) की अचानक ही तेजी आना प्रतीत होता है।

ता० ३ से १२ फरवरी तक दश दिनमें—

भाव टिके रहें या साधारण घटबढ़ होवे। दुतर्फा घटबढ़के मौके लगे हुए नजराणेके सौदेको सुधारना व्यापारीका परम कर्तव्य है। बाजारमें जोखम नहीं है तो जोटा खा लेना।

सौर फाल्गुन मासका ब्यौरा

(ता० १२ फ़रवरीसे १२ मार्च तक)

इस मासके योगायोगों पर विचार करनेसे प्रतीत होता है कि मार्केटमें भावोंकी रफ्तार साधारण घट-बढ़में चलते पहले मंदी फिर तेजी, तेजीमें तेजी मालूम देते नितान्त महीना मंदीकी ओर पूरा होगा। जैसे रुईके लिए तेजीके योग हैं वैसे ही चांदीके लिए सस्ताई होना विदित होता है।

ता० १२ से १८ फरवरी तक प्रथम सप्ताहमें—

पहले ३ दिन कुछ मंदी रह कर आगे धीरे-धीरे भाव बढ़ने वाले हैं; रुई आदिके भावमें तेजी आनेकी तैयारी हो रही है। मंदीके व्यापारको समेट लें।

ता० १९ से २५ फरवरी तक दूसरे सप्ताहमें—

रुईमें २०) ३०) चान्दी मूँगफली एरण्डामें ३) ४) अलसी गेहूँमें ।।) ।।।) सोना विनौलामें १) १।) के लगभग तेजीके योग हैं। व्यापार तेजीके तरीकेसे करना आरम्भ कर दें।

ता० २६ फरवरीसे ३ मार्च तक तीसरे सप्ताहमें—

यहाँ तेजीमें तेजी आकर भाव उछाला खाकर सप्ताहके अन्तमें टिके हुए प्रतीत होंगे। यहां अन्तमें तेजीका चान्स खतम होने वाला है।

ता० ३ से १२ मार्च तक चौथे सप्ताहमें दश दिन तक—

मारकेटमें दुतर्फा घटबढ़ चलते संयोग कुछ मंदी के प्रतीत होते हैं। रुईमें १५) २०) सोना विनौला ।।=) ।।।) मूँगफली चांदी एरण्डा २) २।।) अलसी गेहूँ ।) ।=) के लगभग दुतर्फा घटबढ़ होगी।

सौर चैत्र मासका ब्यौरा

(ता० १३ मार्चसे १२ अप्रैल तक)

इस मासके समस्त शुभाशुभ योगोंके मननसे प्रकट होता है कि रुईके भावमें तेजीका असर अधिक

रहते अनन्तर मंदीका मावजा मालूम दे। वस्तुतः रुई ३०) ४०) अलसी गेहूँ ॥) ॥=) सोना बिनौला १॥) २) चान्दी मूंगफली एरएडा २॥) ३) की संख्या उछालेमें लेते मार्केट डल होना मालूम देता है, व्यापार समयके रुखको देख कर करें।

ता० १३ से १६ मार्च तक प्रथम सप्ताहमें—

पहले ४ दिन बाजार मंदा रह कर आगे वस्तुओं के भावमें अचानक ही उछाला (तेजीका) आ धमके। उछालेमें माल बेचते मन्दी हीकी चालका उपयोग करें।

ता० २० से २६ मार्च तक दूसरे सप्ताहमें—

यहाँ बाजारमें तेजी अवश्य आवेगी, इस उछाले का उपयोग अवश्य करें। पहले अगर माल नहीं बेचा हो तो यहां बेचाए करें या मन्दी लगाएं।

ता० २७ मार्चसे २ अप्रैल तक तीसरे सप्ताहमें—

पहले ४ दिन तक वस्तुओंके टिके हुए भावमें कुछ मंदीका असर वापरे और अन्तिम ३ दिनोंमें बाजार ऊपर उठता दिखाई देगा।

ता० ३ से १२ अप्रैल तक १० दिनमें—

३ से ६ अप्रैल तकके सप्ताहमें रुईमें १५) २०) चांदी मूंगफली एरएडामें ३) ४) बढ़ जाएं तो आश्चर्य नहीं। ऐसे ही दूसरी वस्तुओंका भी अनुमान लगालें। ता० १० अप्रैलसे बाजारभाव कुछ दिन टिके रह कर आगे मंदी प्रारम्भ होगी।

जीवन क्या है ?

सोचा था कि जीवन सुखका एक क्रीड़ोद्यान है।
अस्ताचलगामी मरीचिमालीसे ज्ञात हुआ कि नाशमान है॥
शिशुके मन्द-हास्यने बताया कि जीवन प्रेमका अंकुर है।
जलके बुलबुलोंने बताया कि जीवन क्षणभंगुर है॥

अनुरक्त कामिनीने बताया कि जीवन अनुराग सार है।
परीक्षामें अनुत्तीर्ण छात्रने कहा कि यह एक भार है॥
देशहितेच्छुकने कहा कि यह लोकोपकारकरण है।
कारागारमें बन्धनयुक्त जनने कहा कि जीवन मरण है॥

सन्तोषी कृषकने बताया कि जीवन तो परिश्रम धर्म है।
कर्मयोगीने बताया कि जीवन ही एक उत्तम कर्म है॥
मृतपशुभक्षण न कर मृगराजसे उद्बोधित हुआ कि जीवन मान भार है।
दीपशिखा पर जलते हुए पतङ्गने सम्बोधित किया कि यह भस्मसार है॥

बहुविरही जनने कहा कि जीवन केवल अश्रुविमोचन है।
अज्ञाननष्टकारी विज्ञने संकेतित किया कि जीवन लोकलोचन है।
अभिमत है रचयिताको कि लौकिक विषय सुकृत बाधक हैं।
अरु वेदविहित मार्गानुसारी जीवन ही एक धर्मसाधक है॥

कवयिता—श्री पं० भवानीदत्त शर्मा व्याकरणाचार्य

स्वास्थ्य-रक्षा

नीम्बूकी उपयोगिता—

नींबूका स्वास्थ्यकी दृष्टिसे बड़ा उपयोगी है। उसमें विटामिन 'सी' की प्रधानता होनेसे वह पाचक-यन्त्रको व्यवस्थित करनेमें बड़ा लाभप्रद है। यदि आप कोष्ठबद्धता (कब्जसे) पीड़ित हैं, तो गरम पानीके एक प्यालेमें थोड़ासा नींबूका रस निचोड़कर उसमें एक चुटकी नमक डालकर पी जाइये। सोनेके पूर्व और प्रातःकाल उठने पर। कुछ ही दिनोंमें आपको आश्चर्यजनक लाभ प्रतीत होगा। इसी प्रकार जो गठिया रोगसे पीड़ित हैं वे भी इस प्रकार नींबूका रस पीनेके उपरान्त स्वास्थ्य लाभ कर सकेंगे। शिर पीड़ा, पित्तका प्रकोप आदि भी प्रातः नींबूका रस पानीके साथ पीनेसे दूर हो जाते हैं। यदि आप दन्त रोगोंसे पीड़ित हैं, तो पानीमें कुछ नींबूकी बूंदें निचोड़ लीजिए और मुँह धो डालिए। पानीमें सोडा-बाई कारबोनेट (खानेका सोडा) भी मिला लिया जाय तो दांतोंका हिलना-दुखना भी रुक जाता है। त्वचाको निखारनेके लिए भी नींबूका रस काम देता है। नहानेके पानीमें जरासा नमक और नींबूका रस डालकर स्नान करनेसे रंग निखरता और त्वचा स्वच्छ होती है। नींबूका रस दालमें निचोड़कर खानेसे भोजनका स्वाद बढ़ जाता है। जिस समय नगरमें कोई संक्रामक रोग फैला हो, उस समय नित्य प्रातः नींबूका शर्बत पीनेसे रोगके आक्रमणका भय नहीं रहता। रोग कीटाणुओंको मारनेका इसमें बड़ा गुण है। नींबूके सेवनसे हमें भयभीत होनेकी आवश्यकता नहीं है। उससे सर्दी-जुकाम नहीं होता।

उषःपान—

उषःपान पर आयुर्वेदमें इतना अधिक कहा गया है कि उसे अति-रञ्जनकी सीमा तक पहुँचा हुआ भी कहा जा सकता है। उषःपानसे कहते हैं मनुष्यके सारे रोग नष्ट होते हैं और वह सौ वर्ष तक जीवित रहता है। 'तारोंकी छाया' में उषःपान किया जाना चाहिए। 'तारोंकी छाया' से आशय है उस बेलासे है, जब उषाका आगमन क्षितिजमें होता है। उससे वात-पित्त-कफ तीनों दोषोंका शमन होता है। सफेद बालोंकी बाढ़ रुक जाती है और चेहरे पर तेज आ जाता है। 'उषःपान' से कब्ज दूर होनेका अनुभव तो अनेकोंको होगा। पर उषःपानके सम्बन्धमें एक बातका स्मरण रखना चाहिए। वह यह कि 'पानी' बहुत ठण्डा न हो। अन्यथा उससे लाभके बदले हानिकी ही अधिक सम्भावना है। पानी यदि ताम्बेके बर्तनमें रातको रक्खा जाय तो और भी अच्छा है। उषःपान करनेके पश्चात् कुछ पैर घूमनेके अनन्तर शौच जानेसे अच्छी 'शुद्धि' हो जाती है। यह 'बिना मोल' आयुर्वेदिक प्राकृतिक नुस्खा अनुभव करने योग्य है।

स्वास्थ्यके चुटकुले

१—भोजन जल्दी-जल्दी मत करो। खूब चबा-चबाकर खाओ जिससे मुँहकी लार मिल सके। जल्दी किए हुए भोजनसे दांतोंका काम आंतोंको करना पड़ता है, और इस प्रकार नित्य आंतों पर कामका भार बढ़नेसे वे किसी दिन हड़ताल कर देती हैं। परिणामतः अजीर्ण कब्ज आदि रोग आ घेरते हैं।

२—नित्य व्यायाम करनेका अभ्यास डालो। प्रायः चार मील नित्य घूमनेसे स्वास्थ्य अच्छा रहता है। यदि आप किसी रोग विशेषसे पीड़ित हैं तो अधिक घूमनेकी आवश्यकता है।

३—प्रातः ब्राह्म-मुहूर्तमें उठनेसे आयु बढ़ती है। दीर्घायु पुरुषोंका यह निश्चित अनुभव है।

पौराणिक ऐतिह्यविवेचन

[लेखकः— "कश्चित् उज्जयनीस्थ"]—[द्वितीय वर्ष 'शरदङ्क' से आगे]

मि० पार्जिटर प्राचीन ईरानियोंको भी भारतसे पश्चिमकी ओर विस्तृत हुए द्रुह्यु ही मानते हैं। आर्यों के आन्तर-विग्रहसे एक शाखा ईरानमें गई और एक भारतमें आई, यह कल्पना निरर्थक मानते हैं।

४—पार्जिटरका चौथा सिद्धान्त यह है कि ऋग्वेदके प्राचीन सूक्त अनार्य— द्राविड़ोंके अर्थात् सूर्यवंशी अनार्य राजाओंके अथवा इन राजाओं और 'दैत्य और दानवों' के साथ सम्बन्ध रखने वाले ऋषियोंके बनाए थे, ऐलोंके अर्थात् 'आर्यों' के नहीं। यद्यपि वेद और वैदिकधर्म स्थापित होनेके अनन्तर इनका प्रचार ऐलोंके छत्रके नीचे ही हुआ। ऐसा अद्‌भुत मत मद्रास युनिवर्सिटीके प्रो. डॉ. गिलबर्ट स्लेटरने भी अभी ही "The Drayidian Element in Indian Calture" नामक अपनी पुस्तकमें प्रतिपादित किया है। इसके अनुसार द्राविड़, मूलतः ईजिप्ट निवासी थे, और नागपूजा, सूर्यपूजा भी ईजिप्टसे भारतमें आई। अभी तक पाश्चात्त्य विद्वान् हम लोगोंके 'शिव' को द्राविड़ देव हैं ऐसा बतलाते थे। अब विष्णुको भी द्राविड़ बतलाना चाहते हैं!

अब पार्जिटरकी पुस्तकके इन चार महत्त्वके प्रतिपादनोंका अवलोकन करें।

१—मि. पार्जिटरने अपने अतुल श्रमसे और अभ्यासपूर्वक पुराणोंका (प्रथम) तिरस्कार और (पुनः) उपेक्षाकी दशामेंसे उद्धार किया है इसके लिए प्राचीन भारतके इतिहासका प्रत्येक प्रेमी इनका उपकार मानेगा।

"इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।"

इतिहास और पुराणोंसे वेदका समुपबृंहण करना याने अच्छी रीतिका विस्तार करना। क्योंकि अल्पश्रुत (थोड़े पढ़े हुए) पुरुषसे वेद डरते हैं कि ऐसा न हो यह मेरा नाश कर दे। अर्थात् वेदका पूरा ज्ञान इतिहास-पुराण जाननेसे ही होता है— ऐसा महाभारतका वचन है, और यह सत्य है। किन्तु मि. पार्जिटर इस से आगे जाते हैं और प्राचीन इतिहासके ज्ञानके लिए पुराणके सामने वेदको 'अप्रमाण' ठहराते हैं। यह एक अभ्यासीका पक्षपात है। इतिहासके विषयमें वेदका प्रामाण्य पुराणसे अधिक मानना चाहिए इसका स्पष्ट कारण यह है कि वेद मूलरूपमें सुरक्षित रहा है और पुराणोंमें प्रक्षेप और रूपान्तर बहुत हुए हैं। किन्तु ये प्रक्षेप और रूपान्तर, विवेचक बुद्धि निकाल सके तो पुराणोंको सर्वथा त्याज्य नहीं गिना जा सकता। यहाँ तक मि० पार्जिटरके साथ हम मिल सकते हैं। मीमांसादर्शनमें कहा है कि "विरोधे त्वनपेक्षंस्याद्-सतिह्यनुमानम्" श्रुति और स्मृति (स्मृतिमें पुराणका समावेश हो जाता है) के बीच विरोध आने पर स्मृति को त्यागना, और स्मृतिके आधारभूत श्रुति न मिले तो भी, श्रुति एक समय थी। कालवश वेदकी शाखाएं लुप्त हुई उसमें यह श्रुति लुप्त हुई किन्तु वह मूल तो थी ही, ऐसा अनुमान करना। इस सिद्धान्तमें एक यह बात भी मान ली जाती है कि जिसकी श्रुति उसीकी स्मृति। अर्थात् स्मृतियोंकी आधारभूत श्रुति एक बार थी ही। बहुत सी श्रुतियाँ लुप्त हुई ऐसा तो स्वीकार करना पड़ेगा ही, किन्तु जिसका श्रवण नहीं हुआ और जो वंश परम्परा जनसमाजकी स्मृति मात्रमें चली आई ऐसा भी था, और इसके लिए "स्मृति" नाम सर्वथा उपयुक्त भी है। बहुत सी बातें ऐसी भी होंगी जो कि आर्योंकी अमुक जातिके साहित्यमें न लिखी गई हों, और पासकी दूसरी आर्यजातियोंने लिख ली हों—और इसके अनन्तर पुनः लुप्त हो गई हों, अथवा उन्होंने लिखा भी नहीं हो और सबकी स्मृतिमें रही हों। इसका सामान्य दृष्टान्त संस्कृत भाषाके इतिहासमें भी मिलता है। वर्तमानमें हम जिसे वैदिक और संस्कृत भाषाकी भाँति जानते हैं वह भारतके अमुक स्थलमें बसी हुई अमुक जातिकी भाषा ही थी। जिसमें दूसरी आर्यजातिकी भाषाके एवं द्राविड़ भाषाके शब्द पीछेसे दिखाई पड़ते हैं। इसी प्रकार स्मृतियाँ प्राचीन आचार विचारकी जैसे वेदमें परिपूर्त्ति करती हैं, वैसे इतिहासके विषयमें पुराण करते हैं। अर्थात् वेदमें समाई हुई उस समयकी एवं उसके पहलेकी बहुत सी बातें पुराणों द्वारा पूरी हुई हैं। [क्रमशः]

प्रभात

[कवयिता— श्री पं० नन्दकुमार शर्मा "विशारद"]

अब आजा रे! मधुमय प्रभात।
कर दूर निविड़ तामसी रात॥

जिसने रविको छवि छीन किया
वर-वसुधाको श्री-हीन किया।
लोचनको ज्योति—विहीन किया
क्या क्या न किये भीषण अघात॥१॥

थे कलरव आकर जनावास
उनमें न रहा जीवन अभास।
केवल श्रुति—गत होते उसास
है कैसा भीषण अश निपात॥२॥

सकुचे विकसित तरु बेल लता
नीरव वापी सर औ सरिता।
हैं अकर्मण्य उद्भट कर्ता
करतूत हुई अब सभी ज्ञात॥३॥

विश्वास दिलाय श्रमित—दीन
करने हैं मुझको श्रान्ति—हीन।
पर कर डाले जीवन—विहीन
यह गुड़ दिखाय पाषाण घात॥४॥

जब प्रकट हुआ सच्चा स्वरूप
तब हुआ दृष्टिगत अन्धकूप।
हा! उजड़ गई बगिया अनूप
आश्चर्य बाड़ ही खेत खात॥५॥

रोई प्रकृती लख दीन दशा
है अश्रु कणोंसे भरी रसा।
यह सिंह जालमें बुरा फंसा
कर करि पुकार हरिको बुलात॥६॥

करुणा करुणामयकी प्रगटी
उड्डुगण वाहनिकी शक्ति घटी।
छुप रहे जहाँ तहाँ वे कपटी
तम चुर ध्वनि पुनि चहुँदिशि सुनात॥७॥

प्राचीदिशि कुछ-कुछ हुई लाल
पश्चिमके हियमें उठा शाल।
जर्जर होते लखि तिमिर जाल
आई सुखदायक त्रिविध वात॥८॥

तेरे स्वागत हित उठे जीव, अंगड़ाई ले ले हो सजीव।
प्रमुदित पशु पच्ची भी अतीव, तरु लता वेलि सब लहलहात॥९॥

ग्राहकोंको सूचना

मनीआर्डर भेजते समय प्रत्येक पुराने ग्राहकको अपना ग्राहक-नम्बर और नये ग्राहकको 'नया' शब्द कूपन पर अवश्य लिख देना चाहिए। ऐसा न करनेसे मूल्य जमा करने और अङ्क भेजनेमें विलम्ब हो सकता है। लिफाफेमें मूल्यके टिकट भेजना अनुचित है, ऐसे लिफाफे कभी कभी खोये भी जाते हैं जिससे ग्राहकोंकी हानि होती है।

गताङ्कमें 'ज्योतिर्विदोंसे कुछ प्रश्न' शीर्षक जो लेख प्रकाशित हुआ था — उन सब प्रश्नोंका सप्रमाण युक्तियुक्त शास्त्रीय उत्तर तथा 'सनातनधर्मकी महत्ता' 'चरणामृतका वैज्ञानिक महत्त्व' 'असुर' 'तुलसीका प्रभाव और अद्‌भुत गुण' शीर्षक गवेषणापूर्ण निवन्ध एवं 'वर्षमान' आदि पर ज्योतिश्शास्त्रके महत्त्वमण्डित लेख आगामी अङ्कोंमें प्रकाशित होंगे। —व्यवस्थापक।

"श्रीस्वाध्याय" के गतांक

'श्रीस्वाध्याय' के प्रत्येक अङ्ककी भारतके गण्य मान्य धुरन्धर विद्वानों एवं सुप्रसिद्ध समाचार पत्रोंने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इनमें सभी लेख सारगर्भित मौलिक और ठोस सामग्रीसे परिपूर्ण हैं; साथ ही प्रत्येक अङ्ककी भविष्यवाणियाँ ६५ प्रतिशत ठीक मिली हैं। कई वर्षसे चलने वाले बड़े बड़े पत्रोंने जितनी सफलता और ख्याति प्राप्त नहीं की उतनी सफलता एवं सुख्याति 'श्रीस्वाध्याय' ने दो वर्षके स्वल्पसे समयमें प्राप्त करली; यह इसके सञ्चालकों एवं प्रेमी पाठकोंके लिए गौरवका विषय है और पत्रके लोकोपयोगी होनेका प्रत्यक्ष प्रमाण भी है। अब गताङ्कोंकी बहुत थोड़ी प्रतियाँ शेष हैं। जिन तीन अङ्कोंकी माँग बहुत अधिक है और प्रतियाँ बहुत थोड़ी नाममात्रकी शेष हैं उनका मूल्य तिगुणा कर दिया गया है। इन सब अङ्कोंका संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जाता है। इससे नवीन ग्राहकोंको पूरी फाइल या किसी विशेष अङ्कको मंगानेका निर्णय करनेमें सुविधा होगी।

प्रथम वर्षकी फाइल

१—'शरदङ्क' मूल्य १) रु०

इसका विशेष परिचय पृष्ठ ५ पर देखिये।

२—'हेमन्ताङ्क' मूल्य २) रु०

इस अङ्कमें मोक्षप्राप्तिका मर्म, राष्ट्रभाषा-मीमांसा, ब्रह्मार्पण, जीवन-रहस्य, धर्मको जाननेकी विधि, ग्रहण विवेचन (चन्द्रमा ग्रहण और राहु क्या वस्तु है? इनसे हमारा क्या सम्बन्ध है? ग्रहणमें दान जपादि का विशेष महात्म्य और भोजनादिका निषेध क्यों है?) राष्ट्रियपर्व होली, हेमन्त, ज्वालामुखीमें वनौषधियाँ, आचार्य श्री अभिनवगुप्तपाद आदि कई लेख अत्यन्त गवेषणापूर्ण मननीय हैं।

३—'वसन्ताङ्क' मूल्य १) रु०

इस अङ्कमें अपमान न करो, मोक्षप्राप्तिका मार्ग, धर्मनिर्णयमें क्योंका स्थान, अहिन्सा, ऊंचा आदर्श, सांसारिक बर्ताव, वसन्त, राष्ट्रियपर्व श्रीपरशुराम जयन्ती इत्यादि लेख अत्यन्त आकर्षक एवं पठनीय हैं। श्रीपरशुरामस्तोत्रका पद्यानुवाद भी इसमें है।

४—'ग्रीष्माङ्क' मूल्य १) रु०

इस अङ्कमें राजाका आदर्श, भारतीयदर्शन और आत्मज्ञान, अनुपम-शान्ति-साधन, क्या कलियुग समाप्त हो रहा है? नागपञ्चमी, उपाकर्म श्रावणी रक्षाबन्धन, श्रीकृष्णजन्माष्टमी और उसका महत्त्व, श्राद्धविवेचन, श्रीदेवीनवरात्र और शक्ति-सञ्चय, विजयादशमी, विनाशकाल, विश्वशान्ति और ग्रह-शान्ति, ग्रीष्म, प्रावृट्, अनुभूत योग, वारोंका क्रम, ज्यौतिष और वेदकी एक वाक्यता, विराटनगर, पौराणिक ऐतिह्य विवेचन और दुर्गा दुर्गतिनाशिनी इत्यादि कई लेख बड़े मार्मिक खोजपूर्ण एवं महत्त्व-मण्डित हैं। इन लेखोंकी भारतके बड़े बड़े धुरन्धर विद्वानों और पत्र पत्रिकाओंने मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है। चारों अङ्कोंकी पूरी फाइलका मूल्य ४।) रु०।

द्वितीय वर्षकी फाइल

१—'शरदङ्क' मूल्य ३) रु०

इस अङ्कमें राष्ट्रपति, आत्माऽनुभवके कुछ अंश, कीर्त्तनकी महत्ता, मानवजीवन एक पहेली है, पितृ-लोकका समय विभाग और श्राद्धरहस्य, दीपमालाका रहस्य, दीपमालिका विज्ञान, भारतीय ज्यौतिषप्रणाली, कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धः, स्वाध्यायकी महिमा, शूद्रक-अग्निमित्र-इन्द्राणिगुप्त-विक्रमादित्य प्रथम, पौराणिक ऐतिह्यविवेचन, अक्रूर, और ग्रहयोग प्रतियोग चमत्कार इत्यादि कई लेख अत्यन्त मननीय और उपादेय हैं, जो अध्ययनसे ही सम्बन्ध रखते हैं।

२—'हेमन्ताङ्क' मूल्य १।) रु०

इस अङ्कमें भारतकी भारती कौनसी होगी ?, जीवनकी एक झांकी, भगवती श्रीसीता, बृहस्पति और ममता, भारतीय ज्यौतिष प्रणाली, कालाय तस्मै नमः, महायुद्ध शीघ्र समाप्त नहीं होगा, नौवर्ष पहलेकी भविष्यवाणी, श्रीमहाशिवरात्रि, श्रीरामनवमी, शिक्षा का भारतीयीकरण, हेमन्त, वसन्तोत्सव कैसे मनाया जाय ? वासन्ती (आषाढ़ी) नवसस्येष्टि होलिका, आर्य-जातिका जन्मस्थान इत्यादि लेख अत्यन्त उपयोगी और देखने तथा मनन करने योग्य हैं।

३—'वसन्ताङ्क' मूल्य १) रु०

इस अङ्कमें स्वत्व, जीवनकी एक झांकी, ब्राह्मण, अक्षयतृतीया, श्रीपरशुरामाष्टक, कालका गाल, आधुनिक क्रयविक्रयविज्ञान, क्या रोगोंका कारण रोगाणु हैं ?, श्रीमहावीरजीका लङ्का निरीक्षण इत्यादि लेख बहुत ही मार्मिक एवं अन्वेषणात्मक हैं।

४—'ग्रीष्माङ्क' मूल्य १) रु०

इस अङ्कमें युद्ध, शान्तिरस्तु, श्रीगणपति पूजन, नागपञ्चमी, श्रावणी, श्रीकृष्णजन्माष्टमी, देवीनवरात्र, भारतीय ज्यौतिषप्रणाली, काल, वर्तमान विश्वव्यापी संग्राम और ज्यौतिष, विषूचिका (हैजा), यास्क और पाणिनिका समय इत्यादि लेख सारगर्भित रोचक एवं अत्यन्त मनन योग्य हैं।

इस द्वितीय वर्षकी पूरी फाइल (चारों अङ्कों) का मूल्य ६) रु० है।

तृतीय वर्षका "नववर्षाङ्क"

(शरदङ्क)

यह पिछले सब अङ्कोंसे बड़ा, अत्यन्त उपादेय ठोस सामग्रीसे परिपूर्ण १२० पृष्ठका सचित्र अङ्क है। इस अङ्कने पाठकोंको इतना अधिक आकर्षित किया है कि प्रकाशित होते ही कई नवीन ग्राहक धड़ाधड़ बन गए और अङ्क दो महीनेमें ही सब समाप्त हो गया। आशा से अधिक नवीन स्थाई ग्राहकोंका मूल्य पहले आजाने के कारण जिन पुराने ग्राहकोंका मूल्य समय पर नहीं आया उन्हें यह अङ्क हम नहीं भेज सके और न वी० पी० के आर्डरोंकी मांग ही पूरी की जा सकी है। अब इस अङ्ककी प्रतियाँ हमारी फाईलमें भी बहुत ही थोड़ी सीमित सी शेष हैं, अतः इस 'नववर्षाङ्क' का मूल्य ४।।) रु० निर्धारित किया गया है। जिन लोगोंको अत्यन्त आवश्यकता हो वे ही ४।।) रु० मनीआर्डर द्वारा भेजकर यह अङ्क मंगा सकते हैं। सब लोगोंकी माँग पूरी नहीं की जा सकेगी।

आवश्यक सूचना

'श्रीस्वाध्याय' का नमूना बिना मूल्य किसीको भी नहीं भेजा जाता है, अतः कोई सज्जन नमूनेके लिए बाध्य न करें। यदि एक प्रति (नमूनार्थ) मंगवानी हो तो उसके लिए १) रु० भेजना आवश्यक है। जिन सज्जनोंके जवाबीपत्र या उत्तरके लिए टिकट आवेंगे उन्हींको संस्थाकी ओरसे उत्तर दिया जायगा। पुराने ग्राहकोंको रुपया भेजते समय कूपन पर अपना ग्राहक नम्बर लिखना आवश्यक है। 'श्रीस्वाध्याय' का प्रत्येक अङ्क प्रकाशित होनेकी तिथि (शुक्ला दशमी) को प्रत्येक ग्राहकके नाम बड़ी सावधानीसे भेज दिया जाता है। यदि किसी ग्राहकके पास न पहुँचे तो पहले अपने स्थानीय पोस्ट आफिस (डाकघर) में पूछताछ करके पोस्टमास्टरके उत्तरके साथ १५ दिनके अन्दर हमें सूचना देनी चाहिए।

पत्रव्यवहारका पता—व्यवस्थापक, श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन (शिमला)

श्रीदुर्गा भवन

यह जान कर हमारे भारतीय सम्पूर्ण नर-नारियों को परम हर्ष होगा कि "श्रीदुर्गा-भवन" की स्थापना हो गई है। इसमें श्रीदुर्गाभगवतीके सम्बन्धमें जितना भी वाङ्मय होगा उस सबका संग्रह किया जाएगा। अच्छे २ योग्य विद्वानोंसे अन्वेषण कराया जाएगा, तथा क्रम-बद्ध सुचारु रूपसे उसका विवरण भी प्रकाशित होगा। इस समय दुर्गासप्तशतीकी सात आठ टीकाएं तथा छः सात प्रकारकी भिन्न २ रूपोंमें मुद्रित पुस्तकें इसमें संगृहीत हो चुकी हैं। अतः "श्रीस्वाध्याय" के पाठकों एवं अन्य सज्जनोंसे भी प्रार्थना है कि जिन-जिन लोगोंको सप्तशतीके सम्बन्धमें जो भी कुछ विशेष ज्ञान हो वह लेखबद्ध कर नीचे लिखे पते पर भेजनेकी कृपा करें। जितनी प्रकारकी पुस्तकें, टीकाएं, भाष्य, अनुवाद, निबन्ध आदि जो भी कुछ हों एक-एक प्रति भेज कर अनुगृहीत करें। यह संस्था लोकोपकारक है इस कारण विशेषतः अमूल्य ही भेज कर इस शुभ कार्यमें सहयोग प्रदान करें। जो महानुभाव मूल्य लेकर भेजना चाहें, वे अपनी पुस्तकोंके विवरण तथा मूल्यकी पृथक् सूची बना कर हमारे पास भेजें।

श्रीस्वाध्यायसदन

श्रीस्वाध्यायसदन एक ऐसी संस्था होने जा रही है जो भारतमें एक सर्वोच्च अन्वेषकका कार्य करेगी। अपने लोकोपकारी कार्योंसे राष्ट्र तथा धर्मकी भली-भांति सेवा करती हुई उनकी उन्नतिका प्रयत्न करेगी। इसमें संस्कृत तथा हिन्दीके सब विषयोंके ग्रन्थ संगृहीत होंगे और वाङ्मयका अन्वेषण, अनुशीलन तथा उसका स्वाध्याय होगा। उसके सक्रिय प्रचारका भी प्रयत्न किया जाएगा। इस संस्थाके द्वारा अच्छे २ विद्वान् तथा कार्यकर्ता पुरस्कृत होंगे।

सर्वप्रथम इस संस्थाने "श्रीस्वाध्याय" नामक त्रैमासिक पत्र प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है, जिसके तृतीय वर्षका द्वितीयाङ्क "हेमन्ताङ्क" के रूपमें आपके हाथोंमें ही है। इसे शीघ्र ही मासिक करनेका आयोजन किया जा रहा है। अतः राष्ट्र, धर्म, जाति तथा स्वातन्त्र्यसे प्रेम रखने वाले सभी भारतीय सज्जन तन-मन-धनसे इस संस्थाको उन्नत एवं अखिल भारतमें आदर्श बनानेके लिए हाथ बटानेमें सङ्कोच [illegible] हुए सबका हित करेंगे।

पत्र व्यवहारका पता—व्यवस्थापक, श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन [शिमला]।

श्रीस्वाध्यायसदनका ज्योतिष-विभाग

इस विभागमें ज्योतिष सम्बन्धी प्रत्येक कार्य शास्त्रानुसार सन्तोषजनक रीतिसे किये जाते हैं। जन्मपत्र वर्षफलमें आयुः, सन्तान, स्त्री, धन, व्यापार, नौकरी, शरीरका सुख-दुःख, भाग्योदयादिका पूरा पूरा विचार शास्त्रप्रमाणानुसार लिखा जाता है। प्राचीन तथा नवीन दोनों पक्षसे गणित होता है, दोनों पद्धतियोंका पारिश्रमिक (फीस) भिन्न २ है। जन्मपत्रकी फीस ११) रु० से १०००) रुपये तक। वर्षफल ५) से १००) रुपये तक। एक भावका सूक्ष्म विचार (यथार्थ निर्णय) के ११) रु०। आयुर्विचार (अंशायुर्गणित मारकेश-विचार मृत्यु-समय-स्थान-रोग-मोहादि निर्णय सहित) राजा महाराजा एवं सेठ साहूकारोंसे १००) रु०, सर्वसाधारणसे २५) रु०। टेवा बनवानेकी फीस २) रु०। भारतसे बाहर अन्य देशोंमें उत्पन्न हुए बालकोंके शुद्ध इष्ट और केवल लग्न कुण्डली बनानेकी फीस ५) रु०। विवादास्पद प्रश्न पर शास्त्रानुसार व्यवस्था बतलानेकी फीस ५) रु०। शुद्ध विवाह-मुहूर्त्त और ग्रहमेलापक (कुण्डली मिलान) की २) रु०। सामान्य प्रश्न १) रु०।

प्रत्येक कार्यकी आधी फीस पेशगी मनीआर्डर द्वारा पत्रके साथ ही भेजना आवश्यक है। बिना प्रारम्भिक (एडवांस) प्राप्त हुए कार्य आरम्भ नहीं किया जाएगा। उत्तर प्राप्त करनेके लिए जवाबी कार्ड अथवा टिकिट भेजना आवश्यक है

पता—व्यवस्थापक श्रीस्वाध्यायसदन [ज्यौतिषविभाग] सोलन [पंजाब]।

श्रीग्रन्थमालाका प्रथम पुष्प
श्रीपञ्चस्तवी
(श्रीमद्धर्माचार्य भगवत्पाद प्रणीत)

यह एक अत्यन्त प्राचीन तथा भक्तोंके सम्पूर्ण मनोरथों को पूर्ण करनेवाला श्रीमहामायाका स्तोत्ररत्न है। लाखों भक्तोंने अनुभव किया है और आगे भी करेंगे कि यह स्तोत्ररत्न संसारमें अद्वितीय है।

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम श्रीमदमृतवाग्भवाचार्य प्रणीत कुछ प्रकाशित तथा अप्रकाशित ग्रन्थरत्न

श्री परशुरामस्तोत्र

यह एक अत्यन्त ओजस्विनी भाषामें लिखा हुआ भगवान् श्रीपरशुरामका स्तोत्र है। भारतके अनेकों पत्र पत्रिकाओंने तथा विद्वानोंने इसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है। राष्ट्रभाषानुवाद सहित सचित्र द्वितीय संस्करण छपकर तैयार है।

श्रीराष्ट्रालोक

अत्यन्त सरल तथा सरस संस्कृतभाषामय इस ग्रन्थके अध्ययनसे नस २ में राष्ट्रप्रेम व उत्साह भर जाता है। राष्ट्रिय व्यक्तियोंके सम्पूर्ण कर्तव्य, राष्ट्रको स्वतन्त्र व उन्नत करनेके [illegible] किसे कहते हैं ? उस पर किसका अधिकार होता है ? इत्यादि विभिन्न राष्ट्रिय विषयोंका सम्पूर्ण ज्ञान हो जाता है। बड़े २ राष्ट्रिय नेताओंने इसकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है। अधिक क्या, गागरमें सागर है। राष्ट्रभाषानुवाद सहित द्वितीय संस्करण प्रकाशित करनेका प्रयन्न हो रहा है। मूल प्रथम संस्करण समाप्त है।

श्रीसप्तपदीहृदय
(राष्ट्रभाषानुवाद सहित)

भारतीय आर्यविवाह-संस्कारमें सप्तपदी नामक क्रिया कितनी सुन्दर एवं महत्त्वपूर्ण है यह तो पाठकोंको विदित ही है। किन्तु इस सप्तपदीका वास्तविक रहस्य आज तक किसी भी विद्वान्‌ने खोल कर नहीं लिखा। "एकमिषे" इत्यादि सूत्रोंके यथार्थ रहस्यको खोल कर भारतीय आदर्शके राष्ट्रिय रूपमें यह श्रीसप्तपदीहृदय नामक ग्रन्थ लिखा गया है। विशेष क्या आदर्श-दाम्पत्य-जीवनका तत्त्व इस पुस्तकमें भरा पड़ा है।

श्रीआत्मविलास
(सुन्दरी राष्ट्रभाषा व्याख्या सहित)

मनुष्यमात्रके लिए परम कल्याणकारी व सन्मार्ग-प्रदर्शक यह वही अद्भुत आध्यात्मिक दार्शनिक ग्रन्थरत्न है, जिसके प्रकाशित होते ही दार्शनिक जगत्‌में हलचलसी मच गई और सैकड़ों प्रतियाँ हाथोंहाथ लग गईं। इस ग्रन्थको पढ़नेसे स्थितप्रज्ञता प्राप्त होती है, चित्त शान्त होता है, संसार बाहर भीतर सम्पूर्ण रूपसे आनन्दमय प्रतीत होता है। अतः यदि आप भी आत्मा क्या है ? परमात्मा क्या है ? ईश्वर जगदुत्पत्ति क्यों और किस प्रकार करता है ? हम क्या हैं ? और हमें क्या करना चाहिए ? दर्शन किसे कहते हैं ? उनका प्रारम्भ तथा अन्त कहाँ होता है ? उनकी उपपत्ति क्या है ? आदि २ आध्यात्मिक गूढ़ रहस्योंसे भली-भांति परिचित हो कर आत्म-साक्षात्कार करना चाहते हैं तो इस ग्रन्थका अवश्य मनन कीजिये। आपके सभी सन्देह दूर हो कर अद्भुत आनन्द प्राप्त होगा। मूल्य २) रु० मात्र।

शीघ्र प्रकाशित होनेवाला

श्रीराष्ट्रालोकका

श्रीराष्ट्रसञ्जीवन संस्कृतभाष्य

इसके विषयमें संक्षेपसे ही हम पाठकोंको सूचित करते हैं कि यह ग्रन्थरत्न सम्पूर्ण साहित्यसागरका सार है। इसके जोड़का ग्रन्थ आज तक संसार भरके किसी भाषाके साहित्यमें नहीं लिखा गया। ग्रन्थ क्या है, सम्पूर्ण राष्ट्रिय विषयोंका हृदय है। ग्रन्थमें प्रणेताने स्वाभाविक पूर्ण विज्ञानके आधार पर सम्पूर्ण मानव-कर्तव्य तथा स्वभावका उस विशेषतासे प्रतिपादन किया है कि जो एक अत्यन्त नवीव, सुललित स्वभाव-शुद्ध तथा प्रकृति-सिद्ध हो सकता है। इस ग्रन्थका स्वाध्याय प्रत्येक राष्ट्रहितैषीका परम प्रधान कर्तव्य है। न पढ़ने वाले आजन्म पछताएँगे। कईसौ पृष्ठोंमें यह ग्रन्थ समाप्त हुआ है।

सूचना—श्रीआत्मविलासको छोड़ कर शेष सभी मुद्रित पुस्तकें मार्ग-व्यय (दो आने) प्राप्त होने पर "श्रीस्वाध्याय" के ग्राहकोंको विना मूल्य दी जावेंगी।

पता—श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन (शिमला)।

पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी द्वारा अर्जुन प्रेस देहलीमें छप कर, श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (शिमला) से प्रकाशित